:-:०:ॐ: श्रीश्रीगौरहरिर्जयति :ॐ:०:-:

ॐ रसचन्द्रिका ॐ

कविवरहरदेवजीविरचित

(ब्रजभाषा में)

सम्वत् २०१२
मूल्यम्— ५० नये पैसे

प्रकाशक—
कृष्णदासबाबा
कुसुमसरोवर,
राधाकुंड
(मथुरा)

भूमिका

कृष्ण-भक्ति की चैतन्य-सम्प्रदाय-धारा में शताधिक कवि हुए जिनकी एक बृहत् सूची मैंने "संतवाणी" पटना में प्रकाशित कराई थी। पश्चात् श्रीप्रभुदयाल जी मीतल ने कवियों के संक्षिप्त जीवन-वृत्त और उनकी रचनाओं के परिचय को प्रस्तुत कर हिन्दी जगत् का भारी उपकार किया। वस्तुतः बाबा कृष्णदास जी महाराज महान्त ग्वालियरमंदिर, कुसुमसरोवर ने ही ब्रज भाषा की इस विलुप्त धारा का प्राकट्य किया और विद्वानों को अनुसंधान के लिए दौड़ा दिया। प्रस्तुत ग्रंथ उनके द्वारा प्रकाशित ब्रजभाषा ग्रन्थों की ही एक कड़ी है। बहुत दिनों से इस ग्रंथ के प्रकाशन की वे चेष्टा में थे। वृन्दावन निवासी श्रीमान् नंदकिशोरमुकुट वाले से उन्हें वह कापी मिलि है। ग्रंथ का संक्षिप्त परिचय देना अपना कर्तव्य समझते हैं॥

हरिदेवजी जाति के अग्रवाल वैश्य थे। संवत् १८६२ में आप का जन्म और संवत् १९१९ की ज्येष्ठ शुक्ला ११ को आपका शरीर पात हुआ था। मिश्रबन्धु विनोद के अनुसार उनका जन्म काल सं०१८३० और कविता काल सं०१८५७ है किन्तु यह प्रामाणिक नहीं। इनके पिता का नाम रतिराम जी था और वे वृन्दावन में परचूनी की दूकान करते थे। पिता अच्छे काव्य-प्रेमी थे अतः उन्होंने अपने पुत्र हरिदेव के लिए प्रारम्भ से ही उपयुक्त वातावरण बनाया और उन्हें व्यवस्थित काव्य-शिक्षा प्रदान कराई। इनमें काव्यरचना की प्रतिभा थी जिसे इन्होंने अनुशीलन और कवि-समागम से और भी विवर्धित कर लिया। रीतिकालीन कविता में जिस बहुज्ञता, शास्त्र-ज्ञान और शैली के दर्शन होते हैं वह हरिदेव जी के काव्य में भी विद्यमान है। अंतिम चरण में रीति साहित्य वृन्दावन की रसभूमि को अप्रभावित न रख सका। रीतिकालीन ग्वाल-जैसे कवि का सम्पर्क उन्हें मिला ही था। वे भी कुशाग्र बुद्धि के थे॥

इनके द्वारा रचित ५ ग्रंथों का पता चलता है—(१) रसचंद्रिका (२) छन्दपयोनिधि (३) काव्यकुतूहल (४) रामश्वमेध और (५) वैद्यसुधाकर। मिश्रबंधुओं ने "छन्दपयोनिधि" और "नायिकालक्षण" का उल्लेख किया है। वस्तुतः रसचन्द्रिका ही नायिका भेद का ग्रंथ ज्ञात होता है। कहा नहीं जा सकता कि रसचन्द्रिका से पृथक् कोई "नायिकालक्षण" ग्रंथ भी हरिदेव जी ने रचा था॥

रसचंद्रिका के प्रत्येक प्रसंग की समाप्ति पर हरिदेव जी ने स्वयं को "श्रीराधिका-रमण पदारविंद मकरंद पानानंदित अलिंद श्रीरतिराम आत्मज" कहा है। आज भी इनकी वंशपरम्परा श्रीराधिकारमण चरणाश्रित है। इस ग्रंथ के अन्त में भिन्न हस्त लेख में जो छन्द संकलित है वह इस बात का प्रमाण है कि ये गौडश्वरसम्प्रदाय में दीक्षित थे॥

काव्यकुतूहल, रामाश्वमेध और वैद्यसुधानिधि में से रामाश्वमेध श्रीनंदकिशोर मुकुटवालों के पास सुरक्षित है किन्तु उसके लेखक के विषय में प्रामाणिक रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता। वैद्यसुधानिधि की हस्तप्रति बाबाकाशीदास जी, वृन्दावन रासमंडल के पास कही जाती है। नीचे इनके दो ग्रन्थों का हम परिचय प्रस्तुत करते हैं-(१) छन्दपयोनिधि-पिंगल के आधार पर व्रजभाषा में रचित यह एक सुंदर रचना है। इस ग्रंथ का सम्वत् १९६३ में खेमराज श्रीकृष्णदास के द्वारा "श्रीवेंकटेश्वर-स्टीम" प्रेस में प्रकाशित हुआ था। वृन्दावन निवासी महन्त कन्हैयालाल का अनुवाद भी इसके साथ है। इस रचना में आठ "तरंग" हैं, जिनमें छन्दशास्त्र के विभिन्न अंगों का बिशद वर्णन हुआ है। प्रथम तरंग में छंद लक्षण, द्वितीय में लघु-गुरु लक्षण, तृतीय में गण-निरूपण, चतुर्थ और पंचम में प्रस्तारादि अष्टांग वर्णन, षष्ठ में गणों और वर्णों के फलाफल तथा सप्तम और अष्टम तरंगों में क्रमशः मात्रा छंदो एवं वर्ण छंदों का सविस्तार विवेचन है। छन्दशास्त्र का ज्ञान पाने के लिए यह उपादेय

ग्रंथ है। कुल छन्द ५४४ हैं ॥

रसचन्द्रिका—यह नायिका भेद और रसभेद का सुन्दर ग्रंथ है। कवित्त दोहा और सवैया छंद का कवि ने प्रयोग किया है। राधा और कृष्ण को लक्षित कर नायिका तथा नायक के भेद-विभेदों का सानुप्रासिक ललित शैली में वर्णन किया गया है। "भक्तिरसामृतसिंधु" और "उज्ज्वलनीलमणि" की परम्परा में न रख कर हम इसे लौकिक काव्यशास्त्रों की शैली में ही रखेंगे। फिर भी कवि शृंगारी कवि नहीं है! शृंगार के उज्ज्वल रूप का ही वह वर्णन कर मनोविनोद करना चाहता है। राधा-ठकुरायन के पायन को विलोक कर ही वह रचना-प्रवृत्त हुआ है। वृन्दावन की (उपास्यस्थलो) प्रारम्भ में अभ्यर्थना है फिर कालिंदी नदी की। रसों के भेदों का वर्णन देकर आलम्बन और उद्दीपन तथा अनुभावों को वर्णित किया गया है नायिकालक्षण, वसुगुणों का लक्षण, वसुगुणों का निरूपण, रूपलक्षण, गुन-लक्षण, शीललक्षण, प्रेमलक्षण, कुललक्षण, वैभवलक्षण, भूषण-लक्षण दिखा कर अनुरूप उदाहरण प्रस्तुत किए है। राधिका के रूप का उदाहरण द्रष्टव्य है—"कोमलता अरविंदन में मकरंद में है मुख वास वसेरो" ...... ।
इत्यादि सवैया द्वारा (पृ० ४ स० १६) में सुन्दर वर्णन है।

अष्टांगवती नायिका, कर्मभेद से नायिका—स्वकीया, अज्ञात-यौवना, ज्ञात-यौवना, नवोढ़ा, विश्रब्धा, मुग्धा, मध्या तथा उसके भेद प्रौढ़जीवना, वक्रवचना, प्रौढ़स्मरा, सुरत-विचित्रा, मध्या-सुरतान्ता, मध्याधीरा, मध्या-अधीरा, मध्याधीराधीरा, प्रौढ़ा लक्षण उसके भेद—प्रौढ़ा उन्नतकामा, लज्जाजितप्रौढ़ा, तथा सुरतान्त पश्चात् प्रौढ़ा के धीरादि भेद बताने के बाद कवि ने परकीया के लक्षण बता कर सुदंर उदाहरण दिए हैं। परकीया के विषय में वे लिखते हैं—

रसिक जनन की परकीया, जग में जीवन जान।
जाके पद रज कन कहूँ, पावत तिया न आन॥ पृ० १७ दो० ५

परकीया भेदों में ऊढा और अनूढ़ा और फिर ऊढ़ा के षट् भेदों में गुप्ता-भूत सुरतगोपना, भविष्यसुरतगोपना वर्त्तमानसुरतगोपना, विदग्धा-बचनविदग्धा तथा क्रियाविदग्धा, लक्षिता-स्नेहलक्षिता और सुरतलक्षिता, मुदिता-अनुशयना-भूत-भविष्य-वर्तमान तीन भेद बताकर रसचन्द्रिका में नायिका भेद के पश्चात् कुलटा का बर्णन छोड़ दिया है। उससे विरसता आने की सम्भावना थी। सुरति-दुखता, यौवनगर्विता, रूपगर्विता, गुणगर्विता, शीलगर्विता, प्रेमगर्विता, कुलगर्विता, वैभवगर्विता, भूषनगर्विता वर्णन के बाद मानिनी का वर्णन है। कालभेद से वसुनायिकाओं के भेद बताए गए हैं। इनमें स्वाधीनपतिका, मुग्धास्वाधीना, मध्या स्वाधीना, प्रौढ़ास्वाधीना, परकीयास्वाधीना, वासकसज्जा और उस के भेद, उत्का और उस के भेद, खंडिता और उसके भेद, कलहांतरिता और उसके भेद, अभिसारिका और उसके भेद, विप्रलब्धा और उसके भेद, प्रोषितपतिका तथा उसके भेद पश्चात् उत्तमा, मध्यमा, कनिष्ठा, जाति भेद से नायिकाओं के भेद-पत्रिनी, चित्रणी आदि, नायक के लक्षण उसके प्रकार अनुराग, उद्दीपन, सखी उनके कृत्य, सखा और उसके भेद, दूती उसके भेद और कृत्य, षट् ऋतु वर्णन, अनुभाव, और लीलाहावादि उसके भेद, सात्विकभाव, संचारीभाव और अन्त में रसों का वर्णन हैं। भयानक रस तक पोथी लिखी हुई है, पश्चात अपूर्ण है। ऐसा लगता है कि यह श्रीहरिदेवजी की साहित्यसाधना का चरम परणति है। हस्त लेख बहुत सुन्दर है। बीच में लेख परिवर्तन भी है। अन्ततः यह रचना साहित्यिक मूल्य की है। आशा है विद्वानों छापे की भूलों को ध्यान में न लाकर इसके काव्यरस का आस्वादन करेंगे। विशिष्ट मूल्यांकन कभी अन्यत्र प्रस्तुत करेंगे।

नरेश बंसल—

हिन्दी विभागाध्यक्ष, श्रीगणेशडिग्री कालेज

कासगंज (उ० प्र०)

❀ श्रीश्रीराधिकारमणो जयति ❀

❀ अथ रसचन्द्रिका लिख्यते— ❀

कवित्त—अमल कमल से है विमल अनूप पद,
सजल जलज सी नखाल दरसत है ।
जन मन मलिंद है मोह मद माते तहाँ,
आनंद ऊछेह दिन रैंन सरसति है ॥
कवि हरिदेव उघरैं ही के कपाट कोटि,
का के द्रिगता के छवि छाँह परसत हैं ।
सुंदरि सिवाजू कैं मंगल करन हार,
मोद भरे गोद में गणेस दरसत हैं ॥ १ ॥

कवित्त—मृदुल अनूप अरुनाई भरे राजैं चारु,
अमल अमोल नखपांति दरसाती हैं ।
किसलै मजीठ अरु इंदुबधु तारागन
जलज जलूसन की ओप ढर जाती हैं ॥
कहैं हरिदेव अरि वृंदन के वृंद कहा,
कोटि कोटि ईंदुन की आद गरकाती हैं ।
राधा ठकुरायन के पायन विलोक मेरी,
उकति अनूठी ऊठी झूठी परिजाती हैं ॥२॥

कविता—फूले फूले फूलन फबी हैं फुलवारैं ओक,
तारैं केल वेलन पें खेल अलिवृंदको !
अगर अगूरैं हैं अनारैं आम आभावट,
खार कषि जूरैं मदचूरैं मृदुकंद को ॥
नीवू ओ नरंगी हरिदेव नवरंगी वह,
कहाँ लों गनाऊ नाम फूल फल वृंद को ।
वृंदारक वंदन सो तीन ताप कंदन सो,
नंदन तैं नीको वन राजै नद नंद को ॥३॥

कवित्त—कहर कलिकाल पै लहर प्रचंड तेरी,
पातक प्रबल जम जूथन के फंद की ।
अधम अधापी महापापी तीव्र तापी तोय,
ताकि तन कन गति पावति सुछंद की ॥
कहै हरिदेव देव रानी वृह्मानी निति,
चाहत निहारवे कों सोभा सुख कंद की ।
सुर ओ असुर नर नाग नर वंदनी तू,
पातक निकंदनी है नंदनी कलिंद की ।।४।।

दोहा—श्री वृषभाँन कुमारि के वंदों पद अरविंद ।
जिन रज रंजित मुदितमन रहत सदा वृजचंद ॥५॥

दोहा—जगतैं अद्भुत सुष सदन वृह्मानंद समान ।
रसिकन को अवलंव है सोई रस सुषदान ॥ ६ ॥

सो रस नव प्रकार—

दोहा—गिन सिंगार अरु हास्य कहि, करुणा रुद्र बिषान ।
वीर भीर वीभत्स अरु, अद्भुत सांत वषान ॥ ७ ॥
नव रस परम पुनीत पैं, है सिंगार रसराज ।
तासु देवता है सकल, देवन को सिरताज ॥ ८ ॥
सो पहलै वरनन करौ, अपनी मति अनुसार ।
रसिक दास मोहि जान कैं, लैंगे चूक सम्हार ॥ ९ ॥

छप्पै—आलंवन नव जुगल जानि उद्दीपन ये सुनि ।
षट रितु चंदन चंद राग रागिन सुगंध पुन ॥
कटाक्षादि अनुभाव वरन सात्विक श्रमहारी ।
लज्जा उत्कंठादि जानि निद्रा संचारी ॥
दोहा—रति अस्थाई भाव है स्याम वरन सोई देव गिन ।
सिंगार हरि देव इम, उभै संजोग वियोग गिन ॥१०॥

अलिवन श्रंगार के दंपति दरस उदार ।
तिनके लच्छन लक्ष अब वरनू मति अनुसार ॥ ११ ॥
तिन में नीकी नायका, नायकता आधीन ।
सो पहलैं वरनन करौं सुनियों रसिक प्रवीन ॥ १२ ॥

अथ नायकालक्षन—

दोहा—जाहे देखैं रसिकन हियैं मधुग रति सरसाय ।
वसु गुन संजुत रसिकनी, कहै नायका ताय ॥ १३ ॥

अथ वसुगुन निरूपन—

दोहा—प्रथमहि जोवन रूप गुन सील प्रेम पहचान ।
कुल वैभव भूषन बहुर, ये बसु गुन जिय जान ॥१४॥

अथ जोवनलक्षन—

दोहा—बालापन कौ भेद कैं, छवि को होय अहूर ।
जग मोहै दिन दिन वढै, जोवन जान जरूर ॥१५॥

स०—इक गोपी लखी रंग ओपी लला, अंग ताके परी कछू रोरही सी ।
कुच चाहैं गहौ रवि के रथ कौं, द्रिग कांननि कौं करें दोरही सी ॥
वलि नेरैं ह्वै नैंक निहारियै तो, रह जाति महामति बोरही सी ।
छिन में छवि देखियै और कछू छिन मैं फिर और तैं और ही सी ॥१६

अथ रूपलक्षन—

दोहा—देखत ही मन कौं हरै वहु सुख पावैं नैंन ।
होय जगत आधीन जहिं, रूप वखानहु अैंन ॥१७॥

कवित्त—रंभासी सचीसी उरवसीसी न तूल होत;
देखि छवि भूल होत बधू मैंन केरीसी ।
समता न पावे एक तिलहू तिलोतमासी,
रूप रूप कामिनि न होत नैंक नेरीसी ॥
एरी हरिदेव की सौं तेरे अंग अंगन की,
सुषमा विलोक लोक हारी मति मेरीसी ।

दीन भयो चंपावन कंचन कमीन भयो,
चंद भयो चाकर चिराकैं भई चेरी सी ॥१८॥

स०—कोमलता अरविंदन मैं, मकरंद मैं है मुख वास वसेरो ।
कञ्चन में तन की दुति राजत, चंचलता सफरीन में हेरो ॥
त्यों हरिदेव सुजान की सौं, सुभ गोंन गयंदन में अटकेरो ।
जोत की ज्वाल मसालन में, अरु चंद में चारु प्रकास है तेरो ॥१६

अथ गुनलच्छन—

दोहा—कायक वाचक कर्म कर बीधै सब को चित्त ।
करै प्रसंसा जगति सब, सो गुनि जानहु मित्त ॥ २० ॥

स०—कोर कला नवलान रंची, रचि भूषण भावनि भेद नवीनो ।
मेंनका सी रमणी कमनीय, भई वलिहार भयो न अधीनो ॥
बीस बिसे वृषभांन सुता, तुम जानत हो कोऊ तंत्र नवीनों ।
तीनहूँ लोकन को मनमोहन, एक विलोकन हीं वसकीनों ॥२१॥
सेस सुरेस दिनेस महेस, निहारै सदां जाहे की द्रिग कोरैं ॥
जै जै भये हैं वली भुवमंडल ते सव तासु कृपा की हिलोरैं ॥
कंपत हैं भ्रुव वंक विलास तैं, दानव देव दिगीसन थोरैं ।
सो वृज गोप वधू के अधीन, ह्वै ठाड़े हैं आपहु हूँ कर जोरैं ॥२२॥

अथ सीललच्छन—

दोहा—कोमल बचन प्रसन्न मन, संयम जनरंजन भाय ।
दीन दया थिरता छिमा, इहि कहि सील सुभाय ॥२३॥

स०—सील की सागर रूप उजागर, नागरि तो उपमा नहि जोर कौं ।
भौंरन कों अरविंदन ज्यों सुखदा, नित आप सखिन की ओर कौं ॥
देखै ससी के वढै सुख जो, कुवलय वन कौं अरु चुंग चकोर कौं ।
सो सुख होत लखे तव आननि, सो तन कौं अरु नंदकिसोर कों ॥२

अथ प्रेमलक्षन—

दोहा—सदा एक रस रहत हैं, तन मन वचनन प्रीति ।
वढ़ै नेह नित नित नयो, जानसु प्रेम प्रतीत ॥२५॥

कवित्त—भीजे हैं अनंग रंग रंगन उमंग दोऊ,
दोऊन कैं अंग जोत जोवन जगी रहै ।
बैठे एक सेज दोऊ अंगन सौं अंग लाय,
हाय हाय तौऊ चित चाह उमगी रहै ॥
ह्वै कर अधीर भारी धीर न धरति दोऊ,
पलकनि ओट दीठ दीठ सौं खगी रहै ।
राधे राधे राधे रट लगी रहै माधो मन,
माधो माधो माधो रट राधे कों लगी रहै ॥२६

अथ कुललक्षन—

दोहा—गुरुजन पूजन धर्म पुनि, लोंने लोक बिचार ।
लाज काज गौरव तहाँ, हैं कुल के व्योहार ॥२७॥

स०—केसर कंचन को रंग लै अरु, सुद्ध सुवासौं लई मधुराई ।
चंद को चारु प्रकास विकास, सरोरुह के वन को सुखदाई ॥
सील लयो गिरजाको अहे, हरिदेव हि त हित मूरत पाई ।
सोध सबै वसुधा की सुधा, जसुधा की वधू विधि तोय बनाई ॥२८

अथ वैभवलक्षन—

दोहा—जहाँ सहज संपति सुसुख, प्रभुता नित निकेत ।
थिरता गत गंभीरता, वैभव जान सचेत ॥२६॥

कविता—रंभासी सचीसी उरवसीसी अनेक तहाँ,
पन्नगी नगीसी कोटि कोटिन सु आलरैं ।
रूप कैसी कामिनी हैं मैंन भामिनी सी कोऊ,
सुंदर सुहावनी हैं जोवन की जालरैं ॥
कहै हरिदेव जुरी भौंन महारानी जू कैं,
सेवत सरस रूप रस की विसाल रै ।
लालनि की माल दिव्य दीपत रसाल तने,
बादलाचदोंवे मणि मोतिन की माल रै ॥३०॥

बारन के भार ही समार न सकति कहा,
आभरन भार को बयान करियतु है ।
घोर धरो चंदन सुवास अंग लायवेकों,
सरस सुगंध ही तें बोझ मरियतु है ॥
नीचै परजंक तें चले के हेत् चायन सों,
मखमल बिछायन सुमन भरियतु है ।
झिझक झिझक नीठ मीठ तोऊ मेरी वीर,
कोलदल पावडे न पाय धरियतु है ॥३१॥

अथ भूषन लक्षन—

दोहा—चमत्कार रचना रुचिर माजै बहु विध अंग ।
भूषन भेष विसेष कहि, अलंकार रस रंग ॥ ३१ ॥

स०—जाते चली मग कुंजन के गल, गुंज केहार गयंद सी गैंन हैं।
कंदुक से कुच वैंनी फनंद सी वंदन विंदु महासुख दैन हैं ॥
देखिये श्रीहरिदेवलला चलि, रूप की रासि रची बिधि श्रैन हैं।
वैन सुधा से सुधानिधि सो मुख खंजन से मन रंजन नैन हैं ॥३३

पुनि–छोटी सी वैस बड़े बड़े नैन उठौ है उरोज महा सुखकारी ।
नूपुर किंकनी हारनि की, झंनकार सु मो मन मोहन हारी ॥
को हुती काल्ह वतावै नरी किन संग सखी तन तास की सारी ।
केसर आड दिये सजनी, नक वेसर ही बड़े मोतिन वारी ॥३४॥

अथ अष्टांगवती नायिका—

स०—जोवन जोति जगी अंग अंग विलोकि अनंग की कामिनि वारी ।
मोह रह्यौ जग को मन मोहन, सील सनेह सुभाय निहारी ॥
हो कुल की मरजाद सरूप, सो रूप को रूप अनूप कहारी ।
भूषन भूष तिहारी करें, तुम भूषन की नित भूषन प्यारी ३५॥

दोहा—यह विध आठौ अंग कर, पूरन नारि जु होय ।
ताही वरनों नायिका, वरनति हैं कविलोय ॥३६॥

केशव आदि महाकविनु, वरनी अमित प्रकार।
सो अब मैं वरनन करों, अपनी मति अनुसार ॥३७॥
पाँचभेद कर नायका, वरनत जिनै विवेक।
भेद भेद प्रित होत हैं, अंतर भेद अनेक ॥३८॥
कर्मभेद वयभेद पुनि, काल सुभाव वखान।
जातभेद कर नायिका, वरनत पाँच सुजान ॥३९॥

अथ कर्मभेद नायिका—

दोहा—कर्मभेद कर नायिका, वरनू तीन प्रकार।
सुकिया इक पुन परकिया, सामान्या निरधार ॥४०॥

अथ सुकिया लक्षन—

दोहा—रहै जु संपत विपत हू,सदां एक उनहार।
जानैं निज पति देवता, सोई सुकिया नारि ॥४१॥

कवित्त—प्रीतम कौ प्रेम है कै नैम है पतिव्रत कौ,
सुषकौ सकेत वृज लोचन की तारिका।
कैधों सील सागर की बाधी है मृजाद विध,
कैंधों ये हित जन के हित की है कारिका।
कवि हरिदेव कै सचाई गुरु लोगन की,
सोतन के हिय की हवाई हद पारिका।
कैधों नंदनंदन के नैनन की सिद्ध निद्ध,
नंदघर कीरति कै कीरति कुमारिका ॥४२॥

दोहा—होत अवस्था भेद कर, त्रिविध नायका सोय।
मुग्धा इक मध्या द्रुतिय, तीजे प्रौढ़ा जोय ॥४३॥
प्रगटति आवै तरुनई, नई जासु के अंग।
ताको मुग्धा नायिका, वरनत हैं रस रंग ॥४४॥

स०—जीतो कछु रंग चंपक को अंग, आप कछु सरसी है मनोज की।
कुंदकली की दली सजनी, विरंच थली उकसान उरोज की॥

त्यों सिर सों दिग कानन आनि, सुहान लगी वतिया रस चोज की।
छीन करी दिन द्वै इकतैं, मुष नैं सुषमा ससि की औ सरोज की ॥४५
जान लगी सिसुता तन तैं, अब आमनहार भई तरुनाई।
वैन मिठान लगेरी भद्रजु, फिरी अंग अंग अनंग दुहाई॥
श्रीहरिदेव सुजान भये, बसरी लषिकैं तव सुंदरताई।
नायदई नव नार्गारतैं, इति सौत सषीन के नैन लुनाई ॥४६॥

दोहा—ता मुग्धा के भेद द्वै, वरनत हैं कविलोय।
अज्ञात जोवना एक पुन, ज्ञात जोवना होय ॥४७॥

अथ अज्ञात जोवना लक्षन—

दोहा—जोवन आवै देह में, ताय न जानति वाम।
अज्ञात जोबना नायका, ताहि कहै बुध धाग ॥४८॥

कबित्त—काल्ह की परोतैं गत ओर ही भई है वीर,
संग सषियन के खेलन सुहावैरी।
चातक की बानी सुन पुलक पसीजै गात,
धीर न धरात मन धीर न धरावैरी॥
त्यों ही हरिदेव को सौं उठी है हमारै उर,
आन कै बिथा सो पेष रोई तन तावैरी।
जानत न मैं हूँ तू तौ जानत है मेरी वीर,
वेदन कहा है या कौ भेद न बतावैरी ॥४६॥

अथ ज्ञात जोवना लक्षन—

जोवन अपनी देह में, आयौ जानत जोय।
ज्ञात जोवना नायका, ताहि कहैं कविलोय ॥५०॥

स०-लै कर फूल गुलाव को फूल सी, वैठ ही बालि हिये अनुरागैं।
लोवत आपने अंग के रंग सों, देख सखी यों कहो बड़भागै॥
होत कहा सम है री भद्र यहि, जोवन जोत जगामग जागै।
आन गयी दव एरी गुलाब की, तेरी सों तेरी गुराई केआगैं ॥५१

दोहा—ज्ञात जोवना नारि के उभय भेद रसिखान ।
एक नवोढा नारि पुनि, विश्रद्ध नवोढा जान ॥५२॥

अथ नवोढ़ा लक्षन—

दोहा—मुग्धा तिय भै लाज जुत, पति रति सौ न पत्याय ।
ताहि नवोढा नायका, बरनै कवि समुदाय ॥५३॥

स०-लाई सखी भुज मेल गलै, पुनि ठेल गई वह केल की जागैं ।
वांह गही उठ नंद के नंदन, सेज समीप लई अनुरागैं ॥
फेर करी विनती रति की, पलटी दुति आनन की तहि जागैं ।
सोभ सरोवर में सरसीरुह, सूषत ज्यों हिम वात के लागैं ॥५४॥

स०-आली गई करकैं धर भीतर, धीर वधाय वधाय कितीवी ।
भाजी तऊ तिय होय ससंक, भरी पिय अंक उठी करसीवी ॥
हार परे हरिदेवहु हा, करि सौंह न षात दिषाय गरीवी ।
चूमन देत नहीं मुख सुंदरि, छूवन देत नहीं कर नीवी ॥५५॥

अथ विश्रद्ध नवोढा लक्षन—

दोहा-होय नवोढा की कछु, प्रीतम सों पतयान ।
विश्रद्ध नवोढा नायका, तासौं कहे सुजान ॥५६॥

कवित्त—ज्यों ज्यों ह्वै निसंक भरौ चाहै अंक प्यारो तीय,
त्यों त्यों परजंक तें धरनि धसकति हैं ।
फैल फैल जात गात गात सौं न लावैं नैंक,
ओछे कुच करि की करनि असकत हैं ॥
चाहै मुख चंद सौं गिलायौ व्रजचंद मुख,
भरन हिये कि यो अरन मसकत हैं ।
नाह नेह नद मैं अनद है दभोयो तोऊ,
नीती गहै सीवी की करन कसकत हैं ॥५७॥
सुरतारंभ याई सौं जानि लीजै ॥

अथ मुग्धा को सुरतांत—

स०–केलि के भौन तैं बालि कढ़ी, सुगई सजनी जन मैं झपटानी ।
छूट परी लट एक महा छवि, गोल कपोलन में दपटानी ॥
सो सुषमा हरिदेव हियै, उपमा तिहू लोकन में न पटानी ।
हेत अमीउ उरोज पै आन, मनौ फनराज वधू लपटानी ॥
इतिमुग्धा ॥ ५८ ॥

अथ मध्या लच्छन—

दोहा—होत सरोज मुखीन में, लाज मनोज समान ।
ताको मध्या नायका, वरनत सुकवि सुजान ॥५९॥

स०–खेलत चोपर चंदमुखी, मिल संग सखीन के रंग रहौरी ।
आये तहाँ हरिदेव लला, ललना के हिये में सकोच भयोरी ॥
जान कैं जी की सुजान जबै, चलियै घर यों सजनी न कहौरी ।
लालि की दीठि परी आँगया पर, वाल की दीठि दिया परदौरी॥६०

स०–यह एक ही चाह रहै चित्त में नित, देखियै प्यारे की रूप छटा ।
पन कीजै कहारी अरी सजनी, उनही रहै नैननि लाज घटा ॥
इम देखैं बने न अदेखें कहू कल, या दुःख की कछु हैरी जटा ।
अरी लाज मनोज के बीच परयो, मन मेरौ भ्रमै नट कौ सो वटा ॥६१

अथ मध्या भेद—

दोह—प्रौढ जोवना एक पुनि, वक्र सुबचना जान ।
प्रौढ़ स्मरा नायका, सुरत विचित्रा मान ॥६२॥

अथ प्रौढ जोवना लक्षन—

स०–जोवन रूप की रास रची, विध अंग सुवास छये छल छोना ।
दीपत सों दव जात रमा, रति कंचन सों तन जात कहौ ना ॥
रूप रसासब पीवन कों, उठ आतुर लाल करो द्रिग दोंना ।
आवतु चंदमुखी चल यों, लखि लाजत मत्त गयंद के छौना ॥६३

अथ वक्रवचना लक्षन—

दोहा—वक्र सुवचना नायका, है पिय को सुखदान।
वचननि माहि उराहनो, देत नैंन भौं तान ॥ ६४ ॥

स०—भोरही तैं मडरात कहा, तुम जानत जोन इहा वन वारी।
जोवन रूप अनूप भरी, रति सी रमनी मन मोहन हारी ॥
जावो यहाँ तैं न आवो इतै, कित हाथ चलावत हो जू बिहारी।
टूटैं हरा फट है कहूं कंचुकी, लागत वान भली न तिहारी ॥६५॥

अथ प्रौढ स्मरा लक्षन—

दोहा०—ता सुंदर के अंग में, झलकै रंग अनंग।
प्रौढ स्मरा नायका, ताहि कहैं रसरंग ॥ ६६ ॥

स०—फूलन के कहैं भूल कोऊ, मत मेरी तो ये अनुमान करे हैं।
नैंन हीं काम के वान महान, सुजान भलै परसां न धरे हैं ॥
कारे अरी कजरारे नहीं हैं, बिसारे महा विस ही सों भरे हैं।
एक विलोक नहीं अवलोकत, री नदलाल विहाल करे हैं ॥६७॥

अथ सुरत विचित्रा—

दोहा०—जाको सुरत विचित्र अति, सुरत विचित्रा जोय।
जानै कोक कलादि कछु, मन भांमन रति होय ॥६८॥

स०—आई हौ देख अवै रंग भौन तें, दंपति केलि कलोल समाजै।
आसन चुंबन में रद दान, करैं कलि कोकि कला सुख साजै ॥
नूपुर की झनकारन सों मिलि, यों बिछुवान की होत अवाजै।
बाजे विजै के बजैं सजनी, जनु मैंन महीपति के दरवाजै ॥६९॥

अथ मध्या को सुरतांत—

स०—प्रात उठी रति रंग किये, रुच रोचन की जुग नैंन विसाल मैं।
पीक की लीक निहारि कपोलन, पोंछन सो कर ओट दुसाल मैं ॥
खूटे उरोज लसैं हरिदेवजू, यौं विथुरे सुथरे कच जाल मैं।
मानसचान की संक हियैं, जनु आन छिपे जुग कोकिसिवाल मैं ॥७०

स०—केल कैं नागर प्रात उठी, तब दीपत फैल रही रंग भौंना ।
बूझत आय सखी हस कैं, तिन सौं सुख रात कों जात कहौना ॥
छूट रही अलि कैं हरि यौं, बलखाय फबी मुख के चहु कौंना ।
हेत अमी के तमीपति पै, चहुटे जनु आव फनीपति छौना ॥७१॥

अथ मध्याधीरादि भेद—

दोहा—सगरी मध्या तीन बिध, धीरा और अधीर ।
धीरा-धीरा तीसरी बरनत हैं बुध वीर ॥ ७२ ॥

अथ धीरा लक्षन—

दोहा—मध्या धीरा वक्रवच, प्रगट रिसाय अधीर ।
रोय जनावै कोप सो, मध्या धीरा धीर ॥७३॥

कवित्त—आये मन भामन भुराने भोन भागन सौं,
भासत भभू कैसी भुजंग मणाकादू है ।
कैधों वडवानल की लपटी लपट आय,
कैधों अवलान के उचाटन को सादू है ॥
करिकें बिचार हम हारी हरिदेव की सौं,
होत निरधार नाहि बाढ़त बिषादू है ।
हा हा कहो लालन ये रावरे के नैननि मैं,
मंत्र है कि तंत्र है कि जंत्र है कि जादू है ।।७४॥

अथ मध्या अधीरा—

स०—कीये अपराध अगाध महा, वह मैं न असाध समाध के टारन ।
एक ही पावक नैंन उघारि, कियो हरनै तव तासु को मारन ॥
आपको कोन बन्यो हमसों, अघ सोक हियै तज कोप करारन ।
द्वै द्रिग पावक पुंज कियै, तुम आये लला अबलान कौं जारन ॥७५

अथ मध्याधीराधीरा—

स०—पीक की लीक लगि लष सुंदरि, लाल के लाल कपोलन ऊपर ।
कोप वढ़ौ तिय के उर मैं, भरि आयो हियो गौ कहौ न कछू पर ॥

यो असुवा वरुनी लग आय, परैं पुनि धाय उरोजन ऊपर।
डारति विंदु अमी के मनो, सस कंजन के कल कान के ऊपर ॥७६

अथ प्रौढा लच्छन--

दोहा--केलि कला में अति निपुन, भरी काम के भार।
सोई प्रौढा नायिका, बरनत सुकवि उदार ॥७७॥

स०-ह्वै कै निरंतर अंक भरौं, पिय अंतर नैंक नहीं अब राषौं।
भूषन ऊष मयूष पियूष की, एक इही अधरामृत चाषौं ॥
श्रीहरिदेव सुजान सुनौ, जीय के अभिलाष कहाँ लगि भाषौं।
आवतु यो मन में तुमैं लालन, लै उर कौ कठला कर राषौं ॥७८

अथ प्रौढा के भेद--

दोहा--प्रौढा उन्नंत जोवना, उन्नत कामा जान।
पुन समस्त रस कोविदा, लज्जाजित उर आन ॥७६॥

अथ प्रौढा उन्नत जोवना लक्षन--

दोहा--प्रौढा उन्नत जोवना, तासौं कहत सुजान।
पूरन जोवन अंग उर, राजै काम कलान ॥८०॥

कवित्त--सारी स्वेत सुंदरि समारी है किनारी दार,
जारीदार कंचुकी उरोजन पै धारी है।
सारस मराल गज चाल सौं रहे हैं लाज,
आनन अनूप आभा ससि की बिसारी है ॥
देवी है कि दानवी है मानवी न होय ऐसी,
रंभा रमा रति सी तिलोतमा सी वारी है।
रूप की दुलारी सी है महा सुकुमारी ताहि,
देषौ वनमारी वनवारी मैं सिधारी है ॥८१॥

कठिन कठोर है अडोल अरवीले महा,
रति जंग विजै के उछाह अवलाषे हैं।

मनमथ महावत के सुंदरि सुहाव तेसे,
नख दान अंकुस तें अंक मनमाषे हैं ॥
कीने हैं अधीन हरिदेव नंदनंदन से,
ऐसे रसलीन गुन जात कापै भाषे हैं।
सोतिनके गरुवे गरूर मद गंजबेको,
उन्नत उरोज ही मत्तंग कर राषे हैं ॥८२॥

स०—भाग जगैं पहुमी के छुवै, पद कोमल कंज लगै किम तातैं।
रूप की राशि अनूप रची बिध, ओप सची की लजात है जातैं॥
है रति में रति सी हरिदेव जू, जानत काम कलान की घातैं।
जान बड़ी है बड़े कुल की, वह नैन बड़े हैं बड़ी बड़ी बातैं ॥८३

अथ प्रौढा उन्नतकामा लच्छन—

दोहा—उन्नत कामा नायका, ताहि जानियैं जान।
ताहि निरंतर प्रान प्रिय, भावै श्याम सुजान ॥८४॥

कवित्त— पोढी पर जंक पै मयंक मुखी आनंद सौं,
लागी लकलंक सौं निसंक अंक नटके।
कीने कलि कोक की कलान के अनंत भेद,
जाघन सों जाय जोर लंक लंक लटके॥
कहै हरिदेव त्यौं कटे हैं कंज कोसन तैं,
भोये मकरंद में अलिंद आय भटके।
देख प्रान प्यारी के प्रान से कढ़े हैं फेर,
बान से गढ़े हैं वे गुलाबन के चटके ॥८५॥

स०—फूल उठे अरविंदन के वन, वंद अलिंदन की अलि छूटी।
होत गुलावन की चटका, सुदिसा चकई चकवान की खूटी॥
ओप निसापति की हरिदेव, छिपी रव की छवि छाजति छुटी।
तोऊ रही ललचाय सखी, दुहूँ ओर दुहून की दीठ अनूठी ॥८६॥

अथ समस्त रस कोविदा लक्षन—

दोहा-सो समस्त रस कोविदा, वरनैं कवि हरिदेव।
पिय कौ देत अनंत सुख, जानै वहु रस भेव ॥८७॥

कवित्त—आज मणि मंदिर में सुंदरि रचीहै केलि,
आनंद सकेल रति मैंन मन रुदै हैं।
करकैं अधि ऊरध उतान विपरीत समै,
देत प्रान प्रीतम के नैन वात हूदै हैं ॥
कहैं हरिदेव मोती मांगतें परे हैं फैल,
लागत उरोजन के अग्र इम सूदे हैं।
मानो निसनायक कौ लायक हुकुम पाय,
कंज कल कान पै नछत्र कोप कूदे हैं ॥८८॥

लज्जाजित प्रौढ़ा लक्षन—

दोहा-रस के वस प्रिय कौं करै, गुरुजन मानैं कान।
लाजति रस कारक जो तिय, लज्जाजित उरआन ॥८९॥

स०-कोन मिठास भरयौ इनमें, तिनकों तज नैंननि देपै पियूषैं।
लाज न जात गडी हम तो, तव देख सषी मधुरै सर ऊपैं ॥
होत हरे हरिदेव छिनै छिन, कोर उपाय कीये नहिं सूषैं।
काल्ह लगे अघरा रद के, छद लालन सो अजहू लगि दूपैं ॥९०

अथ प्रौढा को सुरतारंभ—

कविता—आज मणि मंदिर में रची विपरीत रति,
मंद मंद वाजै कटि किंकनी रसीली की।
जोबन की झुमक लुमक मुख चूम लेत,
काम की कुमष पै हुमक अरवीली की ॥
कहै हरिदेव तैसी बीच नील अंबर के,
राजत है लोल वैंनी पीठ गरवीली की।
उछल उछल छवि छित पै छपाक जनु,
छाजत छिपामैं छत्रि पन्नगी छवीली की ॥९१

स०-केल के भोन तैं भोर कढी, जु गई रंग भौन बधू वृजराज की।
राजत आन सखी गन में जनु सुंदरिता इतनी रसराजकी ॥
ऊँचे उरोजन बीच फवी, हरि यौ सुष मानष रेषद राज की।
राह के त्रास मनो ढुवकी, जुग मेरन बीच कला दुजराज की ॥६२

अथ प्रौढा के धीरादि भेद—

दोहा—प्रौढा धीरा नाह सौं, कोप न करै प्रकास।
आवत अति आदर करै, रति तैं रहैं उदास ॥६३॥

स० आवत देखि पिया रमिया को, तिया अति आदर कैं सनमानो।
आसन दैकैं सुबास धरै, ढिग वीरी वनावन मैं चित आनौ॥
जान कैं जीकी सुजान जवै, हरिदेव कहौ हस है सुखदानौ।
है अपराध हमारो कहा, तुम कोप अगाध प्रिया उर आनौ ॥६४

अथ प्रौढा अधीरा लक्षन—

दोहा—झुक कार डाटति रिस भरी, पतहि दिखावै त्रास।
प्रौढा नारि अधीर सो, वरनत बुद्धि विलास ॥६५॥

स०-टेव परी तुम कौं नित की, हम कौं समझावत ही दिन जाई।
जावो जहाँ तैं भलैं कटि कैं, करियै अब जो तुमरे मन भाई ॥
काम कहा हम सों तुम सों, कहनाबत साच यहै चलि आई।
राषहु मेल कपूर में ओप न हींग न होत सुगंधित माई ॥६६॥

अथ प्रौढाधीराधीरा लक्षन—

दोहा—त्रास दिखा व तु पीय कौ, रति तै रहै उदास।
प्रौढा धीरा धीर सौं, वरनत बुद्धि विलास ॥६७॥

स०-आवत प्रात प्रिया पत की, अखियान कछु अरुनाई निहारी।
जान कें जान चली ढिग सौं, उठ वीरी बनावन के मिस प्यारी।
त्यों हरिदेव गहे झपटें, कुच कानन केलि की बात उचारी।
खीज कै खैचत वैन दलाल कै, वाल नैं माल गुलाब कीमारी ॥६

इति धीरा ॥

दोहा—द्वै प्यारी एक पिय कै, ममता भेद वखान ।
घटहित नारि कनिष्ठा, बडी सुजेष्ठा जान ॥९९॥

स०-झुम झुकी लतिका चहुँ ओरन, चूवत है रंग कोल कली को ।
आख महीचनी खेल तहा, हरिदेव रचौ बहुभाँत भली को ॥
देखिन कौ छर छंद चलौ, छिप नंद के नंदन छैल छली को ।
मूंद रहौ द्रिग एक के यो, पुनि चूम रहौ मुख एक अली को ॥१००॥

इति श्रीराधिकारमणपदारविंदमकरंद पानानंदित अलिंद श्री-
रतीराम आत्मज कवि हरिदेव-विरचितायां रसचन्द्रिकायां
सुकियानमे अवस्थादि भेद निरूपनं नाम प्रथमो प्रभा ॥
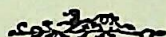
अथ परकीया—

दोहा—दुरै दुरै पर पुरष सौं, करै नारि जो प्रीत ।
परकीया तासों कहें, रसिक राव रस रीत ॥ १ ॥

जो रस भैयुत प्रीत मैं, सो रस अंत न जान ।
तातैं भैजुत प्रीत कों, चाहत रसिक सुजान ॥ २ ॥

जहाँ सरस रति नेह गत, रति पति हित अनुकूल ।
ताई तैं रसिकन मतैं, परकीया सुख मूल ॥ ३ ॥

मुख्य पदारथ जगत मैं, सोई दुरलभ जान ।
ताई तैं सब तियन मैं, परकिया परधान ॥ ४ ॥

रसिक जनन की परकिया, जग मैं जीवन जान ।
जा के पद रज कन कहू, पावत तिया न आन ॥ ५ ॥

ताको अब बरनन करौं, अपनी मति अनुकूल ।
हा हा रसिक सुधारियै, होय जो मेरी भूल ॥ ६ ॥

स०-द्रिग मानैं नहिं छवि देषे बिना, दवये गुरुलोगन मैं रहनों ।
इन सोच बिचारन ही निस द्योस, खरे विरहागन मैं दहनों ॥

अब चोच दहा यन मैं बस कैं, कसि प्रीत के पंथ परयौ बहनों।
सहनौ सो सबै अपने सिर पै, दुख लाल कहा तुम सौं कहनों॥७

दोहा—सो परकीया भाँति द्वै, उढा और अनूढ़ ।
ब्याही ऊढा जानिये, अनब्याही अनऊढ ॥ ८ ॥

अथ ऊढा लक्षन—

स०-सास औ नंद रिसानी रहौ, सुजिठानी रहौ किन कीनैं मरोर।
चवाई चवाय करोई करौ, फिरौ डोडी दिये बसुधान के छोर॥
औंपन एक ठटी हम तो, अब लाज की लेज भली बिध तोर।
किये वृजचंद अनंद के कंद के, आननु इंदु के नैन चकोर ॥९॥

अथ अनूढा लक्षन—

स०-बालपने तें सदा जहिं के संग, खेलन मैं दिन रैन बिहाई ।
माय न धाय खिजी कबहू, कढ़ि कुंजन तैं प्रति कुंजन जाई॥
सो अब वा हरिदेव सुजान को, आनन इंदु महासुख दाई।
नैंक निहारैं कलंक लगै, यह वैरिन वैस कहा चलि आई ॥१०

दोहा—होत अनूढा एक ही, ऊढा के षट भेद ।
तिन के लक्षन लक्ष सब, कहूँ सुनौ तज खेद ॥ ११ ॥

गुप्त विदुग्धा लक्षता, मुदिता सुखद बखान ।
अनुसैंना पांची, छटी कुलटा नारि प्रमान ॥ १२ ॥

अथ गुप्ता लच्छन—

दोहा—भयौ जु द्वै द्वै होत है, सुरत भेद ये तीन ।
कह कछु इनैं छिपावही, गुप्ता नारि प्रवीन ॥१३॥

भूतसुरत गोपना—

स०-फूलन के हित आज गई, वन कुंजन मैं मन मानि उमायौ ।
चोरत चीर फटे सजनी, अरु आन अलिंदनु घैरु मचायौ ॥

भाज थकी हरिदेव की सौं, अब सांझ परैं घर मैं नियरायौ ।
भीजे दुकूल प्रस्वेदन सों तन खेद भयौरी महा दुख पायौ ॥१४॥

अथ भविष्य सुरति गोपना—

कवित्त—आज तें न जैहों जल लैन कों कलिंदीकूल,
ठाढ़ो ही रहत लीये संग सखा सैंनी कौं।
तासौं न वसाय काय धाय मेरी वीर अरु,
रोकति है आय मम पाय मृग नैंनी कौं ॥
ऐसो अम नेक नंदराय को दुलारो हरि,
नैक ना डराति कीनै मोहनतनैंनी कौं ।
छोर डारै कंचुकी सु तोर डारै हारन कौं,
फोर डारै गागर बिथोर डारै वैंनी कौं ॥१५॥

वर्तमान सुरत गोपना—

दोहा—सुरत प्रतक्ष दुराव जो, करि चतुराई नारि ।
वर्तमान रत गोपना, वरनत ताहि उदार ॥ १६ ॥

स०-सांझ परैं घर तैं कढ़हों, वछरान कौं लैंन इहाँ लगि आई ।
आन अर्यौ सजनी ये इतैं इत गोकुल गाम को लोग चवाई ॥
मैं तो डरौं अपने मन मैं, यहि धीठ भयौ जसुधा कौ कन्हाई ।
देखरी देख गहैं कुच वीर, कहै हम सौं तुम गैंद चुराई ॥१७॥

अथ बिदुग्धा दुविध—

दोहा—बचन क्रिया करि चातुरी, संकेतादि जनाय ।
उपपति को तिय जानियै, यह विदग्धा भाय ॥१८॥

अथ वचन विदुग्धा--

स०-ठाड़ी हुती निज पोर छकी, छवि छैल छविले लखे निज नैनों।
आवतु एक गली मैं अली, हसि तासौं कहौं मधुरे इम वैनों ॥

देखियो नैंक इतै सजनी, सिव पूजवे को हमैं साज वनैनो ।
फूल गुलाब के लैंन हौं बाग में, काल्ह गई फिर आजहू जैनो ॥१९

अथ क्रया विधुग्धा—

कवित्त—सुकल पक्ष आठैं कौ आयौ है परव तहाँ,
ठाड़ी ही कलिंदी कूल सुंदरि अन्हायकैं ।
आस पास ननद जिठानी सास वसवास,
भीर नर नारिन की भई ही अघाय कैं ॥
तहाँ हरिदेव कौं निहारि ललचौंही रीठ,
सुंदरि वसीठ दीनी सैंन समुझाय कैं ।
उन्नत उरोजन पै राख कैं सरोज करि,
रही नीलअंबर में आननि छिपाय कैं ॥२०॥

स०-चंदन चौकी पै चंद मुखी, मरा मंदर बैठ कैं बार सम्हारत।
आये लला हरिदेव तहाँ, मधुरी सी कछु मुख तान उचारत ॥
रूप सुधारस पीवन कों, गुर नारिन में तिय ज्यौंत विचारत।
दै अगुरी कच रंध्रन ह्वै, नद नंदन कौ मुख चंद निहारत ॥२१

अथ लक्षता—

दोहा—जाकी कछु अनुमान करि, लखैं सखीजन प्रीत।
सोचै कछु कहि आव नहि, जान लच्छता रीत ॥ २२ ॥

सो दुबिधः—एक स्नेह लच्छता, दुतियै सुरति लछिता ।

अथ अस्नेह लक्षता—

स०-खंजन के मद गंजन से, अलि भंजन रंजन अंजन वारे ।
मींनति पैं वर जोर भये, कर सायल दीन महा निरधारे ॥
खूदसी खूव करैं खिरकी, वह्वै पूनभरे से घरे रति नारे ।
सांची कहै किनरी इन नैननि, आज कहू नंदलाल निहारे ॥२३

अथ सुरत लक्षता—

स०–कोंन महावतु के कुल में, प्रगटयौ वह धीर धुरीन नवीनो।
लाघवता इतनी करकैं, गयौ देखत ताहि भयौ मन दीनो ॥
बूझत हों सजनी हों हा, हा किन साच कहै हुतो कोंन प्रवीनो।
जोवन मत्त गयंद के सीस पै, आय अरी जिन अंकुस दीनों ॥२४

मुदता लक्षन—

दोहा—मन भामन सौं मिलन को, ठ्योत परै जब जोय।
मुदित होय मन में जु तिय, मुदिता कहियै सोय ॥२५॥

स० गंग अन्हावन कौं नरनारि, चले हैं अरोस परोस के सोऊ ।
दासी औ दास जिते हरिदेव जू, राखियै ताहि रहै नहिं कोऊ॥
साम बुलाय कहोरी दहू, घर तू रह और रहै ननदोऊ।
फूल गये सुन वात यो गात, अमात न कंचुकी मैं कुच दोऊ ॥२६

अथ अनुसैना लक्षन—

दोहा—दूर भयौ संकेत थल, कै ह्वै ह्वै कै होत।
अनुसैना सो जानियैं, सोचै त्रिबिध उदोत ॥२७॥

वार्ता—दूर भयौ संकेत जो नायक गयौ हौं न गई सो भूत अनुसैना। अरु जो बिचारै कैं आगे संकेत न बनैगो सो भविष्यत अनुसैना अरु जो साक्षात् संकेत अस्थल कौं मिटौ देखि सोच करै सो वर्तमान अनुसैना।

अथ भूतअनुसैना—

स०-जोवन रूप अनूप भरी रस रंग भरी हौ खरी सखियान मैं।
प्रान पियारे कौ प्रानन के सग, त्रासत सास कभू लखियान मैं ॥
ऐंपन आज सुजान कहा यह वान निहारि भयी झखियान मैं।
नीरज पान लखैं वलवीर के, वीर क्यों नीर भरो अखियान मैं॥

अथ भविष्यत अनुसैना—

स०-चाले के चारु सिंगार सजे, अनभाय कैं अंग भवाय कैं पायनु।
सोच वढ़ौ तिय के तन मैं, तके मीत मिलाप के दायनु घायनु ॥
जानकैं जीकी सुजान जबै, समुझाय कहौ ससुरार की नायनु।
गोने के जात भई दुचती, सुचती कब होहिगी मेरी गुसायनु ॥२६

वर्तमान अनुसैना—

स०-ग्रीष्म द्योस दवाग सी दाह, दिसा विदिसान रही सरसाय कै।
सूख गये सरिता सर ताल, तमाल विहाल भये हैं बनाय कैं ॥
देखी निकुंज जबै उजरी, गुजरी गुजरी के हिये पर आय कैं।
सौन जुहीन के जूथ जरे, लख सौंन जुही सी रही मुरझाय कै
॥३०॥

इति श्रीराधिकारमण पदारविंद मकरंद पानानंदित अलिंद श्री-रतीराम आत्मज कवि हरिदेव विरचितायां रसचन्द्रिकायां कर्म-भेद नायकानामद्धे परकिया वरनने नाम दुतियो प्रभा ॥

दोहा—रस मैं विरस न वरनियैं कहैं रसिक सिरमोर ।
तातें तरुनी तीसरी, नहिं वरनों यह ठौर ॥१॥

सुकिया परकीया दोऊ, तीन भांति की जान।
अब तिन कों बरनन करौं, सुनियौं रसिक सुजान ॥२॥

अन्य सुरत दुखता बहुर, नारि गर्वता जान।
मानवती मिलती नये, हैं ग्रंथन परमान ॥३॥

अथान्य सुरति दुष्यता लक्षन—

रोला—जासौं सुरत करी निज नायक, ताहि देखि दुख पावै।
अन्य सुरत दुखता ता तीय कौं, कवि हरिदेव बतावै ॥४॥

स०—सोन जुहीन के जूथन कौं तज, चंपलता वन में चित दीनो ।
मोलसरी मडराय फिरयौ, फिर मालती को पररंभन कीनो ॥
सो अब हाथ लगाये भलैं, हरिदेव की सौं कस वंधन दीनो ।
या मतमंद अलिंद कौं री, अब तैं अरविंद वधू भल कीनो ॥५॥
छंद पयोनिधे कुंडली—

तोय पठाई लैंन सुध, हों अपने पिय पास ।
तू आई वन सघन तैं, दौरी लेत उसास ॥
दौरी लेत उसास, वदन तें श्रम कन झलकै ।
फटी कंचुकी चारु, कुचन कंटक छद वलकै ॥
देख बिकल तव अंग, वलि होत विकलई मोय ।
घरी न जो फिर पायतु, अरी पठाई तोय ॥६॥

अथ गर्वता में प्रथम योवन गर्वता—

स०—कोमलता भई पायन मैं, अरु जंघ नितंव सुभाय से छोड़े ।
जानी न जात विलात सीये, कट देख चढ्यौ चित सोच के घोडे ॥
हाय दई धौं भई गत को, नये भूधर भार उरोजन ओडे ।
आनन पें चढी ओप अचानक, काननि कों कढ़े नैंन निगोड़े ॥७॥

अथ रूपगर्वता—

स०—तूतौ कहै चलरी चल न्हान कौं, वीर बहाँ जमुना के किनारैं ।
दूवरहै हम कों तो भटू, कढ़ भौंन के कौंन तैं देखन द्वारै ॥
घेरत आय चहुँ दिसतें, लखि पावत नैंक जौं जे बज मारे ।
कासों कहूँ सजनी दुख सों, नित भोंर परे रहैं वैर हमारे ॥८॥

अथ गुनगर्वता—

स०—जंत्र जडीन पढो किन कोरन, होय न जो अन होहिनी है ।
मंत्र न साध असाध मरो, सव तंत्रन की गति टोहिनी है ॥
नीके निहार कहौं निज नैंन, एक इही मति सोहनी है ।
प्रीतम के मन मोहवे कौं, गुन आपनों ही बड़ी मोहनी है ॥६

अथ सील गर्वता—

स०—सास उदास भई न कभू, अरु नंद जिठानी नहीं तैं बिसारी।
जूथ सखी जन के यो कहै, तुम ही हमरे जिय की हौं जिवारी॥
और हितू हित मानै रहै, पै एक हीं मोहि अचंभौ महारी।
प्यारो तो प्यारी कहै सो कहै, पै सौ तहू मो सौं कहै नित प्यारी॥

अथ प्रेम गर्वता—

स०—वान परी हरिदेव सुजान की, जान तजी मृदु दाषरु ऊषै।
ह्वै कैं स्वतंत्र निरंतर सौं, नित पीवत मो मुख चंद पियूषैं॥
मो अधरान लगे रद के छद, सो सजनी निस बासर दूषै।
जानी न जात कछू पर क्यौं, मुख सोतन के खिन ही खिन सूषैं॥

अथ कुलगर्वता—

स०—ऐसी न कोऊ मिली ब्रज में, तव आइ गई हिय मांहि उदासी।
छोंड़ गयौ हमें याही ते ऊधौ जू, डाल गले में सनेह की फांसी॥
सो अब आय मिली है अचानक, तीनहु लोकन की सुखरासी।
खूवरी सूरति की वह कूवरी, देह की दूवरी जात की दासी॥१२

अथ वैभव गर्भता—

छप्पय—वैनी नैंन कपोल, अधर दसनावल जानहु।
पन्नग पंकज मुकर, विंव दाड़म उर आनहु॥
विसकसजल अति अमल, पक्व तरवर पर सोहतु।
कालो दिवस मनोज, अरुन मुकलत मन मोहतु॥
तच्छक समैं प्रभात के, मंजु मृदुल अरु कांत जुत।
नागरि नवल निकुंज मैं, चलियै श्रीहरिदेव नित॥१३॥

अथ भूषन गर्वता—

स०—लैंन कौं दान दही को यहाँ, तुम दानी अनोखे भये कब सूजहो।
घोखैं कहूँ वृज नारन के, अब ग्वारइतै हम सौं न उरूझहो॥

दूद है हार हिये न सौं तो, हरिदेव भलैं अपने मन बूझ हो ।
बेच हो नंद की धैंनु जिती, मण एकहु को लला मोल न पूज हो ॥

अथ मनिनी—

सवैया—

मानरी मान कहो सजनी न, कोरी रजनी लखि मान कूं दै करि ।
प्रीतम नैंन चकोर न केव्र, कोरन वे अभिलाष सुदैकरि ॥
हा हा हितू हरिदेव की सौं, मुख सोतन के अरविंदु मुदैकरि ।
आनन्द कंद अमंद महा यह, आपनो आननि इंदु उदैकरि ॥१५॥

इति श्रीराधिका—रमन पदाविद मकरंद पानानंदित अलिंद रतीराम आत्मज कवि हरिदेव—विरचितायां 'रसचन्द्रिकायां सामन्य नायका वरनने नाम त्रितियो प्रभा ॥

दोहा—बरनी सुकिया परकिया, रस सिंगार की रीत ।
अब बरनौं वसुनायका, कालभेद कर मीत ॥१॥

अथ नाम भेद—

दोहा—स्वाधिन-पतिका नारि पुन, वासकसिज्जा जोय ।
फेर सुउक्ता नायका, बहुरि खंडिता होय ॥२॥
कलहंतरिता नारि पुन, अभि सरता अभिसार ।
मिलै न कंत सहेटथल, विप्र लब्ध सो नारि ॥३॥
जाको पिय परदेस मैं, जान विरहनी सोय ।
प्रोषत-पतिका नायका, ताहि कहैं कवि लोय ॥४॥

अथ स्वाधीन-पति का लच्छन—

दोहा—जाके जोवन रूप गुन, नायक होय आधीन ।
स्वाधिन पति नायका, तासौं कहैं प्रवीन ॥५॥

अथ मुग्धा स्वाधीन पतिका—

स०—दीन कीये हरिदेव के प्रान, सुजान विलोक कैं सूधे सुभायनु ।
मोतन के गर गेरी गरूर, भरे गुन जीवन रूप के चायनु ॥
या बृज मैं ब्रत की बनितान मैं, कौन सी जो मन तोय सराहनु ।
ता पर और सिगार सिंगार, करयौ कहा चाहत है ठकुरायनु ॥६

अथ मध्या स्वाधीन पतिका—

स०—वीरी बनाय दई सो दई हम हू नै लई चित चौगने चायनु ।
बैनी गुही वर फूलन सौं, चुन चूनरी चारु उढाई सुभायनु ॥
चंदन चारु उरोजन सौं, मल कैंसर षोर करी सुषदायनु ।
मानयै एक इती विनती, पिय जावक रंग भरोजिन पायनु ॥७॥

अथ प्रौढा स्वाधीन पतिका—

स०—तारका तू बृजलोचन की, चिर होह सदां तुव हाथ को चूरो ।
प्रीतम के अनुराग की मूरति, राजत भाग सुहाग को जूरो ॥
देख परै हरिदेव की सौं, यह तेरो भटू अधरामृत रूरो ।
बंधु सो बंधु के जीमन को, पर पीमन को भयो बंधन पूरो ॥८॥

अथ परकीया स्वाधीन पतिका—

गुरु लोग कलंक लगायो चहै, सिर नैंकहू नीचे तैं उँचो ज्यौ कीजै ।
चांच दहायनु में बसवौ, इन सोचन देह खिनौखिन छीजै ॥
हा हा हितू हरिदेव हमारी, इती विनती चित दै सुन लीजै ।
घात परैं मिल जैयै कितै, पर लाल इतै नित ऐवौ न कीजै ॥६॥

जै है न रावरी वान सुजान, तो कान्ह कहाँ लगि को समुझै है ।
जै है झवान सौं पायु झवावन, कै फिर कुंज को आबनु जै है ॥
जै है चवाव अवै चल यों, कोऊ नैंकहू दीठ दुरै लख जै है ।
जै है न रावरो लाल कछू, पर हाल कलंक हमें लग जै है ॥१०॥

इति स्वाधीनपतिका ॥

अथ वासकासेज्जा लक्षन—

दोहा—सजै सेज भूषन बसन, पिय आवन जिय जान।
वासिकसेज्जा नायका, जानहु जाय सुजान ॥११॥

अथ मुग्धा वासिकसज्जा—

कवित्त-जावक लगाय चारु चोली सौं सुगंध लाय,
भागभरे भाल वैंदी वंदन दीजियो।
हा हा हरिदेव की सौं अंगनु सम्हार नीकै,
वीनती हमारी एक एती कान कीजियो।
आज परजंक पै मयंक मुखी प्रीतम कौ,
ह्वै कर निसंक भले अंक भरि लीजियो।
प्यारी मुख चंद को पिवाय कै पियूष पी कौं,
पी के मुख चंद को पियूष नैक पीजियो॥

अथ मध्या वासिक सेज्जा—

कवित्त-हीरन के होद पूरे अतर उसीरन सौं,
चंदन चहल चारु चौक नु जडावके।
खासी खसवोयनु के खूटत खजाने खूब,
छूटति फुहारे भारे केसर के आवके॥
आई हौं विलोक हौं तो हाल ही कलिंदी कूल,
पौन अनकूल वहै प्यारी के सुभाव के।
चंदन पलंग अरबिंदन की सेज आज,
सुंदर सम्हार बैठी मंदिर गुलाब के ॥१३॥

अथ प्रोढा वासकसेज्जा—

कविरा-राधिका कुमारी सुकुमारी गुन रूपभारी,
आननि उज्यारी ओप चन्द्रिका निकारी सी।

आगम बिहारी को जानकैं सम्हारी सेज,
सुकमा विलोक मैंन कामिनी विसारीसी ॥
सौंधै तरु कंचुकी सुगंधन समोये केस,
सुंदर सुवेस वेस उषा मान न्यारी सी ।
हीरन के हार चारु चीर जरी तारनिके,
कीनी मणि दीपनतैं दीपत दिवारी सी ॥१४॥

अथ परकीया बासिक सेज्जा—
कवित्त—आगम सुजान प्रान प्रीतम को जानो जब,
मिसही मिस पायल मजीर छोर लीने हैं ।
साहस कै सुंदर सुवाय गुर नारिन कौं,
फूलन के रुच सौं सिंगार तन कीने हैं ॥
तैसे हरिदेव चारु चंदन पलंग पर,
रचे मषतूल के बिछावने नवीने हैं ।
वंद करि द्वारन कौं मंद कर दीपन को,
मंदर की खरकी कमिंद डार दीने है ॥१५॥

अथ उक्ता लक्षन—
दोहा—आवन की करि अवधि पिय, आवै नहिं तहि धाम ।
सोचै हेत आनागमन, सो है उक्ता वाम ॥
स०-सासन आपकी पाय अत्रास तै लै कर हौं वन कुंज सिधारी ।
सोवन कुंजभरी दुख पुंजन, जातहिं दृष्टि परे न बिहारी ॥
व्याकुल वाल परी वन भूम में, जौ न अवै चलहौ वनवारी ।
आन करैं कहू प्रान तजैगी, वहुभानु उदै वृषभानु दुलारी ॥१७॥

अथ मध्याउक्ता—

सवैया—

आवन की बद औध गये, अब तापर ये जुग जाय बिहाने ।
हाय कहूँ वन वीथनि में, इन कुंज गलीन के पंथ भुलाने ॥

कै कहूँ संग सखा गन मैं, हरि खेलत खेलन मैं सरसाने।
कै कोऊ मोतै अनूप मिली, रमणी रहै ताही के रूप लुभाने ॥१८॥

अथ प्रोढ़ाखंडिता—

कवित्त—कैधों काहू कामिनी नैं कान्हर कों कीनो वस,
कैधों कहूँ कोऊ कछू कोतिक रमायो है।
कैधों सखा मंडल मैं खेलत रहेरी हरि,
कैधों इन कुंजन को मारग न पायो है॥
जानियै न जात मोहि बात कछू आलि अब,
बूझत हौं तोहरी अनंग तन तायो है।
काहू भरमायौ कै न पायो उन सोध मेरो,
सांची कह वीर बलवीर क्यों न आयो है॥

अथ परकियाउक्ता—

कवित्त—पौन सरसान लागे मैंन सरसान लागे,
नैंन बरसान लागे वारि बुंद झड़नै।
म्हकन सुगंध लागे ल्हकन सुदंद लागे,
कोस अरविंद तै अलिंद लागे कढ़नै॥
भूषन दुषाय लागे होन उर घाल लागे,
आलीरी चवायनु कैं चाय लागे चढ़नै।
प्रीतम न अंक लागे नाहक कलंक लागे,
छिपनमयंक लागे संक लागे बढ़नै॥२०॥

अथ खंडिता लच्छन—

दोहा—आवै प्रीतम प्रातही, सअंकित जह धाम।
झुककैं देय उराहनो, जान खंडिता वाम॥२१॥

स०—आयेरी प्रात पिया रमणी घर, ओप अनूप हियै रपटानी।
अंजन रेख निहारिकें ओठन, यौं जुग बैन कहे झपटानी॥

झारियै वेग मया कर मोहन, मो मन संक महा दपटानी ।
रावरे आनन इंदु के ऊपर, आन फनंद बधू लपटानी ॥२२॥

अथ मध्याखंडिता—

सवैया—

आए हौ प्रात पिया छवि सौं, छकि छापबनी छगुनी के अगौंडी ।
झीन झगा नख रेख विराजित, मालगडी मुकतान की औंडी ॥
होत दुराय किये तैं कहा, हरिदेव जू प्रीत की रीत ही भौंडी ।
डोंडी वजाय कहै गुन रावरे, रावरेकी इह दीठ कनोडी ॥२३॥

सवैया—आये हो प्रात मयाकर मोहन, सोहन भाग जगे है हमारे ।
भाल दिषै नष चंद कला, द्रिग पावक पुंज किये रतनारे ॥
वैनी गडी भुजगेस के भूषन, मो मन सोच टरै न ये टारे ।
कानन सौ हरिदेव सुने, पर नैननि सौं हरिदेव निहारे ॥२४॥

प्रौढा षंडिता—

कवित्त—आये हौ प्रात, बात कहित तुतरात जात,
गात श्रम सीकर सुहात सुख कारियै ।
बिना गुनमाल लाल जावक रसाल भाल,
कलित कपोल पीक लीक रति वारियै ॥
देत रेख अंजन की ओठन असेष छवि,
हा हा हरिदेव नैंक आरसी निहारियै ।
नैननि की ओप सो अनूप अरविंदन की,
आनन गुविंद के पें कोटि इंदु वारियै ॥२५॥

अथ परिकीया खंडिता—

सवैया—

दोष लला अब दीजियै कौंन कौं, देखत हों सब अपनी भूली ।
वैर कीयौ सगरे बृजगाम सौं, सीख सखी जनहून की हूली ॥

रावरे नेह निवाहबे की, इक चाह रही चित मैं नित भूली।
सो तुम आवतु प्रात भयै, पीय नैंननि मैं रहै साँझसी फूली ॥२६॥

अथकलहंतरता लक्षन—

दोहा—पहलै पिय सौं मान करि, फिर पाछैं पछितात।
कलहंतरता नायका, ताहि कहैं कविराय ॥२७॥

अथ मुग्धा कलहंतरता लक्षन--

कवित्त–लाल तो मनाई तोय चायन सौं पाय पर,
ताहू पर भई तूतौराती रिसहाई है।
हाहा खाय कह्यों नैंक देख प्रान प्यारी इतै,
वैठी दै पीठ फेर सौं है हू न चाही है॥
हारी ही सिखाय कै सहेली हरिदेव की सौं,
आपने गरूर भरी मन में न लाई है।
पहलै करि मान पीछै पछितान ऐसो,
ऐरी ये वान तोय कीनैं धौ सिखाई है ॥२८॥

अथ मध्या कलहंतरता--

सवैया—

आयेरी मोय मनावन मोहन, मैं चरन सौं उन सौंह न हेरो।
भोय लई मति मेरी बिरंचनैं, तू अब कामइ तो करि मेरौ॥
हा हा हितू हरिदेव की सौं, जन्मावधि लौं गुन मानि हौं तेरो।
लावरी बेग बुलै घनश्याम कौं, ऐंपन नाम न लीजियो मेरौ ॥२९॥

अथ प्रौढा कलहंतरता—

सवैया—

प्यारो मनाय रह्यो गहि पाय, सुचायन सौं बच कोमल भाखो।
बैंन कहे हस मैंन कछू, इन नैंनन हू रस नैंक न राखो ॥

भोय गयी मद बीच गुमान के, जीवन को फल जीव न चाखो ।
मार से नंदकुमार कौं हार कैं, हायन मै हियरा पर राख्यो ॥३०॥

अथ परकीया कलहंतरता—

सवैया—

सास के त्रास सहे जांहि के हित, सोतिन के उपहास घनेरे ।
ठान अठान जिठाननि के, ननदीन के बोल कुबोल करेरे ॥
और चवायन की चरचान सौं, चाय परे छतियान दरेरे ।
ता मन मोहन सौं बिन काजहि, आज करे हम त्यौर तरेरे ॥३१॥

अथ अभिसारका के भेद दो–एक अभिसरता दूसरो अभिसारका।

दोहा—आप न जाय संकेत में, जो तिय मान सकोच ।
बोल पठावै पीय कौं, अभिसरता दुख मोच ॥३२॥

सो ये भेद विशेषकर मुग्धा में बनैं। कछुक मध्या हू मैं बनें और प्रौढा मैं परकीया मैं काम प्रेम की आधिक्यता है तासों तामैं नहीं बनैं। गरवावी मुग्धा मध्याई में बनै और कामा प्रेमा ये प्रौढा मैं भी परकीया मैं भी बनै। अरु कृष्णा, शुक्ला ये दोनों भेद परकीया के हैं, सुकिया के नहीं ॥३३॥

अथ मुग्धा अभिसारता–

कबित्त–आनन विलोकैं होत चंद हू की मंद जोत,
अंग की सुगंध सों घेरै है अलिंद जाल ।
नैननि की ओप कौन पूजै अरविंदन की
लाजति गयंदन के वृन्ददेखें मंदवाल ॥
नीठ नीठ लाई हरिदेव ताहि कुंजन लौं,
आदर सों आप नेक आगे ह्वै कै लेउ लाल ।
आई ना अकेली लाई संग द्वै सहेली वह,
सोने की सी वेली है नवेली अलिवेली वाल ॥

अथ मध्या अभिसारिका—

कवित्त-संग लै सहेली अभिसारिकै नवेली चली,
जात अलवेली मिलै आनंद के कंद कौं।
कंचन से गात अरु नैन जलजात ऐसे,
जात मग आधे छिप जात देखो चंद कौं॥
रैंन अँधियारी भई संक मनभारी देख,
सखी नें उचारी धर धीरज सुछंद कौं।
मंद मुसकाहट सौं ह्वै ह्वै प्रकास प्यारी,
टार पट घूंघट उघर मुख चंद कौं॥३५॥

अथ प्रोढा अभिसारिका--

साज चली अभिसार के साजन साजन पैं मुखपान चवीली।
मंद करै हरिदेव की सौं, सुगयंदन की गति कौं गरबीली॥
यो कच औ कुच भारन सौं, लचिकै सुकुमारि की लंक लचीली।
आस वसौं छकि आप मनो, अब छैल छकावन जात छबीली।।३६

अथ परकीया अभिसारका--

साहस कैं अभिसार के साजन, कोरन जोर रचे छर छंदन।
छोर धरै सब बाजने भूषन, भाल पै विंदु दियौ घिस चंदन॥
हीरन के हरिदेव हराकसि, गाडे की ये कुच कंचुकी वंदन।
हाल गयी चल चंदमुखी, मग हेरत ठाड़े तहाँ नदनंदन॥३७॥

अथ परकीया कामाभिसारका--

पावस रैंन अँधारी निहारि कैं, प्यारी नै गौन कियौ हिय कांपत।
कटंक की परवा ह कहा, फन राजन के फन पायन चापत॥
जात चली मग मैं हरिदेव, प्रवीनता सौं अपने अंग झापत।
विज्जु छटा लखि खोलत है, पुनि देख घटा पट नील सौं ढांपति॥

अथ कृष्णाभिसारिका-

कवित्त—अंजन लगाय नैन खंजन मैं मंजु भांत,
ऐन मद अंगराग अंग सुखकारी मैं।

गूँदी मखतूलके छरानछवि छाक वैनी,
छाजत है छितलौं छबीली छबि भारी में ॥
चोवा तरु कंचुकी कसी है हरिदेव तैसी,
भूषन जड़ाऊ मणि मरकत निहारी मैं ।
रैंन अंधियारी सिर सौसनी सम्हार सारी,
प्यारे सौं मिलन प्यारी जात वनवारी में ॥३६

अथ शुक्ला अभिसारका—
ओढ़ चली अतिश्वेत दुकूल, फूलन के उर हार हिलोरैं ।
चंदन चोली रंगी गहरैं, पुनि चंदन लेप कियो तन गोरैं ॥
चांदनी सी मिली चांदनी में, हरिदेव निहारी न जात है भोरैं ।
जात चली यौं अली संग की, लगि गात समीर सुगंध के डोरैं ॥४०

अथ विप्रलब्धा लक्षन—
दोहा—मिलै न पीय संकेत में, विकल होय हिय नारि ।
ताहि विप्रलब्धा कहैं, कविगन बुद्ध उदार ॥४१॥

अथ मुग्धा विप्रलब्धा लच्छन—
कूल कलिंदी कदंब की कुंजन, गुंज अलिंद सुगंध के भूके ।
लाई लिवाय सहेली तहाँ, बहु बात बनावत ही मुख सूखे ॥
देखे न नंदकुमार जवै, सुकुमार के अंग अनंग सौं दूखे ।
धाय परी परजंक पै मानहु, जाय परी सफरी सर सूखे ॥४२॥

अथ मध्याविप्रलब्धा—
मान कछू सजनीन के बैंन, कछू पिय की चित चाह चही है ।
बाल गई उन कुंजन में, अलि गुंज तहाँ सरसाय रही है ॥
देखे न त्यौ हरिदेव लला, ललना अंग अंग अनंग दही है ।
वैन कहे अनखाय सखीन सौं, नैंनन मांहि लजाय रही है ॥४३॥

अथ प्रोढा बिप्रलब्धा—
वाल गई वन कैं वन कुंजन, आनंद सिंधु हियैं भरती है ।

देखे न नंदकुमार तहाँ, तन सीरी वंयार लगैं वरती है ॥
दाब रही कुच यौं कर सौं, सुषमां हरिदेव हियै अरती है।
मानों मनोभव के भय सौं तीय, विनै सिव की करती है ॥४४॥
कवित्त–बैंनी गूंद फूलन सौं मोतिन सम्हारी मांग,
राजैं चारु चंद के समीप तेज तारा से ।
आई केलि कुंजन में नवेली लै सहेली संग,
उमगे हैं आनंद के वारिद अपारा से ॥
देखे पर जंक पै न प्रीतम मयंक मुखी,
तीर से समीर भये तोय तेग धारा से ।
जमुना के कूल ते भये हैं प्रतिकूल ऐसे,
फूलभये सूल से दुकूल भये आरा से ॥४५॥

अथ परकीया विप्रलब्धा–

साहस कैं वन कुंजन मैं, नव वाल गई तन काम के जागैं ।
चैंन टरे उर के तब ही, निस नाहरि नैंक तहाँ अनुरागे ॥
सूख गयौ सुकुमार कौ आनन, ज्यों सरसी रहु सोत के आगैं।
सूल से फूल लगे वन कुंज के, आग से पुंज पराग के लागे ॥४६॥

अथ प्रोषितपतिकालच्छन–

दोहा–जाको पीय परदेस मैं, रहै कछू दिन भोय ।
प्रौषतपतिका नायका, बिरह विकल जो होय ॥४७॥

अथ मुग्धाप्रोषितपतिका–

कवित्त–आपनैं पठाई मोय आइ होय हाल उहाँ,
देख आई नीकैं कै तिहारी प्रान प्यारी पै।
वाके विरह विथा की ज्यौं वूझ हो कथा तो मोपै,
लालन जथा मत सौं जात न उचारियै ॥
नैस कस देसो एक हूं हूं हरिदेव ताय,
नीकैं चित लाय प्रान प्रीतम बिचारियै ।

तिथन मैं ताकौं नित मावस ही जानी जात,
ऋतुन में एक नित पावस निहारियै ॥४८॥

अथ मध्या प्रोषित पतिका–

कवित्त–जादिना तै मोहन विदेश गयौ औध वद,
तादिना तैं गिन तैंही वीतत घरी घरी।
भूली भूष प्यासभौंन भूषन भुलाने है,
कहै न कछू काहू सौं सकोच में भरी भरी॥
चंदन तैं चंदिनी तैं प्यारे हरिदेव विना,
सींचत गुलाब जल जात है जरी जरी।
ज्यौं ज्यौं वन घन में बसंत सरसात त्यौं त्यौं,
बढति मदन घात तन मै खरीखरी ॥४९॥

अथ प्रोढाप्रोषितपतिका—

लाल कौ गौन भयो जब तैं, दरि वाल को हाल भयो इह भांती।
ऐसो बढ़ी बिरहाग कछु तन, ज्वाल की झाल हू कै अधिकाती॥
चंदन नीर उसीर गुलाब के, आब सखी छिरक बहुभांती।
सो सजनी हरिदेव की सौं, वरषा सब बीच बीच विलाती ॥५०॥

अथ परकीयाप्रोषितपतिका––

एरी हि तू हित मान कैं तोय, हों बूझन आई बुरौ जिन मानै।
प्यारे कौ नेंक वियोग नहीं, अरु रोग न वैद कोऊ अनुमानैं॥
ऐंपन श्री हरिदेव की सों, खिन ही खिन जात है गात सुवानें।
व्याध कहा है कहै किनरी, सखी जानत मैं न वो नंद को जानै॥

एक तो प्रोषित भर्तिका एक आगमपतिका।

दोहा–चलन हार परदेस कौं, जाको पिय जब होय।
प्रोषित पतिका नायका, ताहि कहैं कवि लोय ॥५२॥

वैठी ही चंद मुखी सजननि मैं, आई री एक तहाँ इक वाल सी।
कंस नैं दूत पठायो कही, अक्रूर है नाम औ चाल उतालसी॥

जै है प्रभात लिवाय हरै, इम आय परी धुन काननि काल सी ।
नींद औ भूख तजी तब तैं, तन सूख गई तीय चंपक माल सी ।।५३

दोहा—आयो जान विदेश तैं, जो तिय अपनो नाहि ।
आगम पतिका के हियै, मिलबे को उत्साह ।।५४।।

औधविते घर आयेरी लाल, तऊ विध ओर इतो दुख दीयौ ।
भौन प्रवेस कौ दूजी घड़ी, भल जोत सी जोतस को मत तीयो ।।
देखिरी वेग दूं जाय वहाँ, हरिदेव विना छिन जात न जीयो ।
बीती घड़ीन कै फूटी घड़याल, कै घड़याली हलाहल पीयो ।।५५

या रीत सौं और हूं जानियै—

इति श्रीराधिकारमण पदार्विंद मकरंद अलिंद पानानन्दित श्रीरतीराम आत्मज कवि हरिदेव विरचितायां रसचिन्द्रकायां अष्टनायकावर्णनो नाम चतुर्थ प्रभाः ।।

दोहा—काल भेद करि नायका, वरनी आठ सुजान ।
वरनू भेद सुभाव कृत, तीन महा रसखान ।।१।।

१ उत्तमा २ मध्यमा ३ अधमा ।

अथ उत्तमा लच्छन—

दोहा—लखि पीय को अपराध हू, धरै न तीय उर मान ।
अनहितहू सौं हित करै, ताहि उत्तमा जान ।।२।।

भय बिन प्रीत न होत कहूँ, सब लोकन मैं इह बात प्रमाने ।
भै नहीं होत है दंड विना, पुन दंड दियैं हित की चित हानैं ।।
का समझावती हौ सजनी, इतनी हमहू अपने मन जानैं ।
कीजिये मान री कान्ह सुजानि सौं, ज्यौं वलि मान क्रिये मन मानैं ।।

अथ मध्यमा लक्षन—

दोहा—अनहित सौं अनहित करै, पुनि हित सौं हित ठान ।
ताहि मध्यमा नायका, वरनति सकल सुजान ।।४।।

प्रीतम नैंक परोसन सौं, जुग वैन कछूक कहे रससाने ।
देखत भोहै कमान चढायकै, कान लौं वान विलोचन ताने ॥
त्यों सजनी कर जोर हरें, हरि सौं है करी मन में अकुलाने ।
प्यारी कहो तब यौ मुसकाय कैं, जाहु जु जाहु लला हम जाने ॥५॥

अथ अधमा लच्छन—

दोहा—विन अपराध रिसाय तिय, पिय सौं बार बार ।
ताकौं अधमा नायका, वरनति कवि निरधार ॥६॥

कवित्त–तेरे रस लीन नित तेरे ही अधीन मन,
तेरे रूप पानप को मीन अवगाहैरी ।
तेरे गुन ग्रामन गुनत गरवीलो छैल,
तो कौं तज तरुनी तिलोतमा न चाहैरी ।
लोचन चकोर ब्रज चंद के रहे हैं करि,
तेरे मुख चंद के उदोत को उमाहैरी ॥
खात खात सौंहैं हरि भये है लज्जो हैं कहा,
बैठी तान भौंहे नैक सो है क्यों न चाहैरी ॥६॥

इति श्रीराधिकारमण–पदार्विंदमकरंद—पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम आत्मज कवि हरिदेव विरचितायां रसचन्द्रिकायां सुभाव भेद बरनन नाम पंचम प्रभा ॥

दोहा—बरने भेद सुभाव कृत, तीन महा सुखदान ।
जात भेद कर नायका, बरनू चार सुजान ॥१॥
प्रथम पदमनी चित्रनी, सकल सुखन को मूल ।
बहुरि शंखनी हस्तनी, उपजावत तन सूल ॥२॥
लीला नित्य किसोर मैं, पद्मिन्यादिक जोय ।
प्राकृत नारिन के बिषै, शंखन्यादिक होय ॥३॥

तासों वरनौं पद्मनी, बहुरि चित्रनी नारि।
तिन सौं मिल विहरत सदा, मोहन कृष्ण मुरारि ॥४॥

अथ पद्मनी लक्षन—

दोहा—सहज सुगंध सरूप शुभ, पुन्य प्रेम सुख दान।
निद्रा भोजन मानि, रिस, तनक तनक उर आन ॥५॥
सलज, सुबुद्ध, उदार, मृदु, हास्य अंग सुकुमार।
अमल, अलोम, अनंगभू, स्वेत वसन रुच चारु ॥६॥

कवित्त—देखि गति मंद कौं गयंद सिर छार डारैं,
लंक पैषैं केहरी हिये मैं धरसतु हैं।
उन्नत उरोज लखि लाजत सुमेर मृग,
दीरघ द्रिगन कौं विलोक तरसत हैं॥
कवि हरिदेव देखें आनन अमल इंदु,
धाय धाय चाय सौं चकोर सरसतु हैं।
नागर नवेली नेंक हँस बतरात तो पै,
जाने जात मानो पारजात वरसतु हैं ॥७॥

अथ चित्रनी लक्षन—

दोहा—सूक्षम रोम अनंग भू, रति जल गंधित होय।
नृत्य गीत कविता रुचिर, जानत है तिय जोय ॥८॥
कला जो षोडस केल की, कोक काव्य अनुसार।
पहरति चीर बिचित्र सो, जान चित्रनी नारि ॥९॥

भाग जगै पीहुमी के छुवै, पद कोमल कंज लगै किम तातें।
रूप की राशि अनूप रची विध, ओप सची की लजात है मातें॥
है रति मैं रत सी हरिदेव जू, जानत काम कलान की घातें।
जान बड़ी है बड़े कुल की, बहु नैन बड़े हैं बड़ी बड़ी बातें ॥१०॥

अथ नायका को गनना—

दोहा—इक सुकिया द्वै परकीया, सामान्या मिल चार।
अष्ट नायका मिल सुई, बत्तिस होत बिचार ॥११॥

उत्तमादि सौं मिल वहै, पुन छ्यानवें होत।
अरु, चौरासी तीन सौ, पदमनिआदि उदोत ॥१२॥
ग्यारह सै वामन बहुरि, दिव्यादिक के संग।
ये गनना मैं नायका, बरनी बुद्ध अभंग ॥१३॥

इति श्रीराधिकारमण पदाविंद मकरंद पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम आत्मज कवि हरिदेवविरचितायां रसचन्द्रिकायां जाति भेद नायका वरनन नाम षष्ठम प्रभा।

दोहा—यह बिध बरनी नायका, अपनी मति अनुकूल।
अब नायक बरनन कहूँ, सुधी मिटावो भूल ॥१॥

अथ नायक लच्छन—

दोहा—उपजै जाहि बिलोक कें, नवल नारि उर प्रीत।
ताहे को नायक कहैं, लखि ग्रंथन की रीत ॥२॥
रूप शील धन धर्म रत, गुननिधान मत धीर।
अभिमानी त्यागी तरुन, महावली रन वीर ॥३॥

पीत पटी लकुटी वनमाल, सिखंड शिखा सुखधाम सुधारे।
खंजन से मन रंजन नैन, है ऐननि के मद भंजन वारे ॥
पूरन काम कला हरिदेव, पै कोटिन काम कलानिध वारे।
देखेरी आवत जो वन तैं, फिर मो मन तैं न टरें छिन टारे ॥४॥

सो नायक त्रिबिध—

दोहा—सुकिया पति सों पति कहैं, परकीया उपपति।
वैसक नायक की सदा गनका ही सौरत ॥५॥

अथ पति को उदाहरण—

कवित्त-गोनो भयौं जादिन दैं सौनो सो सम्हारै तोय,
तेरे मुख चंद कौं अमंद सुधा चारव्यो है।
तादिन तैं ऊख औ मयूख की न भूख रही,
मधुर पियूष हौ उठाय दूर राख्यौ है।

रति को रमा को औ तिलोतमा को मान तुम,
तेरे पति तेरौ ही रूप अवलाख्यौ है।
अनंद को कंद वीर नंद जसुधा को नंद,
गोकुल को चंद तैं चकोर कर राख्यौ है ॥६॥

सो पति के भेद चार—

दोहा—इक तिय रति अनुकूल है, बहुतिय सम हित दच्छ।
सठ कपटी मिठ बोलनौं, धृष्ट सु धीठ प्रतक्ष ॥७॥

अथ अनुकूल—

स०-गोनो भयो सखी जादिन ते, ब्रज बालनि के तन सूल से सूले।
तो मुख चार सुधानिकौ, हरिदेव निहार रहै नित फूले ॥
और के कोटि कटाक्ष अली, इक तेरी विलोकन कों लखि भूले
तोसी न गोकुल में कुल की, जेहि गोकुलनाथ कीये अनुकूले ॥८

अथ दच्छिन—

कबित्त-जमुना के तीर पै बजाई बलवीर वैन,
ऐन मैंन मोहनी के मंत्र से उचारे हैं।
धाई बृज गोपी रति रंग रस ओपी तन,
अचल विचल पट भूषन सम्हारे हैं।
त्यों ही हरिदेव रचौ रास रासमंडल मैं,
सोलहै सहस्र गोपी तन मोहन निहारे हैं।
सब सों समान रस राखिवे कों रसिक राय,
जेती ब्रज वाल आप ते ते रूप धारे हैं ॥६॥

अठ सठ को उदाहरन—

स०—आये इहाँ मन भूले कहाँ, अरु काके भये रस के लपटी हो।
भीतर और कछू मुख और है, कापै पढ़े इह कौन पटी हो ॥
जोरत दीठन तोरत हो, हित मोरत नैन करो झपटी हो ।
चोरत हो चित औरन के, न डरो मन मांहि बड़े कपटी हो ॥१०

अथ धृष्ट—

स०-आवत है सकलंक तहीं, नित भूलत है सुख सोह कीये की ।
तापैं कहै हँस प्यारी हा हा, अब कै छिन हूजियै मार्लाहिये की ॥
तासौं बसाय कहा सजनी, सुन जाकी परी इह वान वीये की ॥
गार दीये की कछू मन संक न, लाज कछू पुनि मारि दीये की ॥

अथ उपपति—

संग सखीन के इंदु मुखी, जमुना जल मैं करै वीर विहारन ।
आय गये हरिदेव तहाँ, रसिकाई मनोहर मोद सो धारन ॥
देख रुमावल ऐसैं कहौ, उर सौं लपटी फनी देउ विडारन ।
यों सुन कें कर दोउन सौं, तिय चोंकी चकी झिझकी लगी झारन॥

अथ अनुराग लक्षन—

दोहा—देखें तैं कै सुनै तै, चित कौ लागै लाग ।
दंपत तन तासौ कहै, कविजन सब अनुराग ॥१३॥

आई सखी तव तैं कहि तू, घनस्याम सुजान की मूरत तैसी ।
ताछिन तें उनईसी रहै, द्रिग दीहन माझ घटा घन कैसी ॥
चेत न चैन लहै छिन एकहू, वैन कहै नरहै ठिवैसी ।
ऐसी भई सुन तेई दिसा, अब जान यैं देखैते होयगी कैसी ॥१४॥

दोहा—देखन दरसन सौं कहैं, सो है तीन प्रकार ।
चित्र सुपन साद्दात कहि, कबनु कीयौ निरधार ॥१५॥

अथ चित्रदर्शन—

सुंदरि सावरे अंगन की, छवि देख अनंग अनेकन बारे ।
तीर से तीच्छन नैन महा, हैं हिये वनितानि के भेदन हारे ॥
मोहनी मंत्र वसै मुसकान मैं, चोरत चित्त सो वित्त हहारे ।
कार्नान जैसे सुने हे विचित्र, ते चित्र में वेई चरित्र निहारे ॥१६॥

अथ स्वप्नदर्शन—

आज सखी सुपने मैं अचानक, आयोरी नंद लला मम औंन कौं ।

औचक ही अचराय उघार, भयौ हिय हार महा दुख दैन कौं ॥
मैं झुक छूट चली तहिं अंक तें, बोलत सो हंस कें मृदु बैन कौं।
ताई समय गई खूट अचानक, ये अखियाँ दुखियाँ दुख दैन कौं॥

अथ साक्षात दर्शन—

कवित्त—आज हौं गई ही वीर नीर भरवे के हेत,
कहा कहौं तोसों बात भानुजा के तट की।
गागर को भरबो भयौ घूंघट उघरयौ त्योंही,
दीठ परी झाँकी वो अदा की नंद नट की॥
ता छिन ते एरी ये भई है गति मेरी वीर,
बावरी सी होय बन बीथन में भट की।
काननि मैं बसी आन तान मधुरी सी वही,
नैनन में छाई फहरान पीत पट की ॥१८॥

वैसक नायक की प्रीति गनका सूं होय है, सो रसाभास जानकें कहीं नहीं।

इति श्रीराधिका-रमण पदर्विद पानानंदित अलिंद श्रीरती-राम आत्मज कवि हरिदेव विरचितायां रसचन्द्रिकायां नायक बरनन नाम सप्तम प्रभा।

दोहा—रस आलंवन मैं कहे, अपनी मति अनुभाय।
अब उद्दीपन कहत हौं, सुनौ रसिक चितलाय॥१॥

अथ उद्दीपन लक्षन—

दोहा—जिन्हें विलोकत ही तुरत, रस उद्दीपन होत।
उद्दीपन तासों कहें, जिनकी बुध उदोत॥२॥
सखी सखा दूती विपन, उपवन बाग तड़ाग।
सुभ सुगंध अरु चंद पुन, षट रितु पुहुप पराग॥३॥

अथ सखी लच्छन—

दोहा—रहै सदा जो संग अरु, करै काज सब आन ।
चाहै हित ही कौ सदा, सोई सखी सुज्ञान ॥४॥

सो सखी चार बिध—

दोहा—सखी एक हित कारनी, बिंग विदुग्धा एक ।
एक होय बहुरंगनी, अनत रंगनी एक ॥५॥

हितकारनी यथा—

लेहु जू जोग दियौ मन मोहन, ऊधौ जू नेंक इतो बच भाषो ।
बोली तबै ललता बिलखी, लखि लाड़िली जू यह जोग है राषो ॥
प्रीत करी न डरी तब नेंक हू, कान्ह सुनो बलि भूप को साषो ।
बावरी बोय कै पेड़ बबूर के, चाहत फेर अंगूरन चाषो ॥६॥

बिंग विदग्धा यथा—

कूल कलिंदी कदंब की कुंजन, आज लखे कहुँ नंद दुलारे ।
ता छिन तैं यह चाक चढ़े से, रहे छद छंद अनेक उघारे ॥
कौंन कौ कौंन परेखौ करै, अपने अपने न भये बजमारे ।
डौंडी सी देत हैं सीस चढ़े, पन हा पति पातिकी नैंन तिहारे ॥७॥

अनत रंगनी यथा—

जंत्र जड़ी हू पढी बहु भांतन, तंत्ररु मंत्र कीयौ उपचारौ ।
ह्वै है न जाहि कछू सजनी, इम को उन क्यों न कितो पचहारौ ॥
लावरी वेग इतै मन मोहनै, मान इतो वच वीर हमारो ।
कारे डस्यौ नहीं जाहि कहूं वन, बावरी जाहि गयौ डस कारौ ॥

बहु रंगनी यथा—

इंदु मुखी मुख इंदु निहारत, आई सखी इक पूछन ताको ।
आज कहा अधरा टक टोवत, भोर ही तैं उठ आरसी ताको ॥
रात किये लग कै अधरा छत, है री महा सजनी दुख ताको ।
क्यों री सखी रति मैं पति के, रद ना हरी वीर समीर महा को ॥

अथ सखी के काम कथनं—

दोहा—मंडन शिक्षा दैन अरु, उपालंभ परिहास ।
सखी काज ये चार बिध बरनत बुद्ध निवास ॥१०॥

अथ मंडन--

गूदहरा गज मोतिन को, गज गोनी गुवाल गलै सखि डारो ।
देख परयौ पुषरागिन को, अधरा दुतिरंग भयो रत नारो ॥
फेर परी जब दीठ उतै, मरण नीलम को हरिदेव निहारो ।
रीझ रही सजनी छवि देखत, भीज रहो रस नंद दुलारो ॥११॥

अथ सिख्या—

फूले रसाल रसाल की डालन, कूजत कोकिल या रव मंद सौं ।
सौंन जुही औ गुलावन के गन, छाजत हैं छवि गुंज अलिंद मौं ॥
मानरी मान भलो न भद्र इह, औसर मैं पिय आनदकंद सौ ।
कीजै प्रकास निकुंजन कौं चल, आनन इंदु की जोन्ह अमंद सौं ॥

अथ उपालंभ— कवित्त—

सुनकैं गये है तेरी तीखी तान ताछिन तैं, भये हैं अचेतछन चेत न धरत हैं । केते जंत्रवारे अरु तंत्रवारे मंत्रवारे, हारे उपचार कै विचारन करत हैं ॥ मैं हू यह सोच मैं परी हूँ जब ही की वीर, बूझत हौं तोय मन धीर न धरत है । मधुर सुधा से इन अधर अनूप न सौं, जहर के लपेटे वैन कैसैं निकरत हैं ॥१३॥

अथ परिहास—

प्रात उटी रतिरंग कीयै, सजनी रजनी रस मैं सरसानी ।
देखित आरसी आरस सौं, सखि आय कहीं परिहास कहानी ॥
तेरे री गोल कपोल अमोल पैं, ये तिल है न सखी हम जानी ।
चुंवन को थल जान करी है, मनोज विरंच नवीन निसानी ॥१४॥

(इतिसखी)

अथ सखा—

दोहा—पीठमर्द विट चेट पुनि, बहुरि विदूषक जान ।
तिनके लक्षन लक्ष सब, बरनू मति अनुमान ॥१५॥

मोचै मान तियान को, पीठमर्द है सोय ।
विट ताही सौं कहित हैं, अति चातुर जो होय ॥१६॥
आन मिलावै दुहून कौं, ताकौं चेटह जान ।
स्वांग धरै हांसी करैं, ताहि विदूषक मान ॥१७॥

अथ पीठमर्द—

आई सिंगार सिगार किते, कहू देव कुमार सी ओप अनूपर ।
फूलन के पट भूषन चारु, सुगंध सुढार उरोजन ऊपर ।
आई न एकहू सो पीय के मन, देखियै नैंक चलो पग दूपर ।
कोटि सुधा बसुधा तल की, वलि वारियै तेरी रुखाई के ऊपर ॥

अथ विट—

आये घनघोर छाये मोरन के सोर तैसी,
पवन झकोर रति रंग अनुकूलियै ।
चपला की चमक ठमक छोटी बूंदन की,
झींगुर की झीनी धुन चातिक न भूलियै ॥
एरी तज मानि वच मान कै हमारो अब,
गरुवे गुमान गढ सोतन के तूलयै ।
जमुना के कूल फूले फूलन की कुंजन मैं,
फूल के हिंडोरे नैंक प्यारी चल झूलयै ॥१८॥

अथ चेट—

काहू कह्यौ अब हाल ही आन कैं, मैं सुन तोय सुनावन आयौ ।
बैठ रही नह चिंत कहा, अब जाइये वेग जो चाहत जायौ ॥
चौंटत फूलन काल्ह वहाँ, वुह रावरे भाल की लाल हिरायौ ।
आज उहीं उह कुंज गली की, थली में परचौ मन मोहनै पायौ ॥

अथ विदूषक—

जाय कै आप बुलाय दुहून कौ, लाय तहा रस मंत्र उपायौ ।
फेर गयौ कढ़ बाहर कुंज तें, तो लौं वहाँ उन रंग मचायौ ॥

जाने जबै रस के बस मैं, तब ही परहास कौ स्वाग बनायौ ।
ओचक ही चल आप तहाँ, बल दाऊ कौ रूप धरैं पुन आयौ ॥२१

दोहा—मिलवैं नायक नायका, दूतपनै परवीन ।
उत्तम मध्यम अधम सौं, हैं दूती बिध तीन ॥२२॥
हरै सोच उचरै वचन, मधुर मधुर हित मान ।
ताकौं उत्ताम दूतका, बरनत सुकवि महान ॥२३॥

कवित्त-रैंन दिन रावरे गनक लौं गुने है गुन,
रसना रसीली एक नाम कूजयतु है ।
दासी है तिहारी मन बच कैं बिहारी बाल,
आप ये बिचारी सों न ऐसी बूझियतु है ।
सुंदरि सनेह रस सींच सींच पाली तिनैं,
हाय यौं कहा धौं बिरहाग भूंजियतु है ।
कीजिये परसन तौ दीजिये दरस प्यारे,
नेही ह्वै कैं काहे कौं अनेही हूजियतु है ॥२४॥

दोहा—दूजी मध्यम दूतिका, ताहि कहैं कविराज ।
थोरी बातें कहि कछू, कर्‌यौ चहै हितकाज ॥२५॥

अब कौतुक एक निहार कैं नैननि, आई जतावन कौं हरि मैं ।
नवला तन छ्वै निकर्‌यौ वर पौन, भयौ वडवानल की झर मैं ॥
अकुलाय गयौ सर मज्जन कौं, जल जंतु को जूथ धर्‌यौ धर मैं ।
वह वारिज वारि समेत गये, वरछार उडान लगी सर मैं ॥२६॥

अथ अधम दूती-

दोहा--थूरी बातैं हित सनी, कहै तेह जुत जोय ।
अधम दूतिका ताहि कौं, बरनत है कविलोय ॥२७॥

तो तन देखि भई सब तीतर, लाल विनोद पगे रस रीती ।
कोकल कोक कलान प्रवीन, परे वा मनोज की कामिन जीती ॥

आई हौं बाज अरी बक मैं, अरु मैंना कहै ये कौन सी रीती ।
तूती गुमान भरी नहीं मानत,मोर मनावत ही निस वीती ॥२८॥

अथ दूती काज कथनं-

दोहा—अस्तुत अरु निंदा विनैं, बिरह निवेदन जान ।
चार काज दूतीन के, कींने कवनु प्रमान ॥२६॥

अथ अस्तुत--

कोरन जोर सिंगार रचैं, तन लाय सुगंध सुढार अतूलै ।
तोऊ रुचै न सखी पिय के चित, तो मुख की सुषमा सम तूलै ॥
चंपक कुंद असोक अनंत की, पाय बसंत लतागन फूलै ।
फूलै नही ज्यौं अली अलि को, हिय देखे बिना छिन मालती फूलै ॥

अथ निंदा-

कवित्त–रूप घरसान पै सम्हारे है बिरंच हद,
मद मतवारे भरे बिस के से वेरे हैं ।
हेर हेर हनत अचूक नर नागरनि,
वागरन बीच वर व्याध उरमेरे हैं ॥
कहा लौं बखानौं मैं चलाकी चष चोटन की,
घायन लखाय कीनैं घायल घनेरे हैं ।
पंच सर सर सौं विशेष अवरेखे वीर,
तीछन तरल ये कटाच्छ सर तेरे हैं ॥३१॥

अथ विनय--

सिंध मैं पैठ सहे कितने दुख, हेत बिचार कियौ तप भारौ ।
भागन सौं पुनि बाहर आय, बिधाय तनै गल बंधन डारौ ॥
जाचत हेतु मैं प्रान प्रिया, वलि नैंसक दीठ कया की निहारौ ।
रावरे ऊंचे उरोजन ऊपर, चाहतु है यह हार विहारौ ॥३२॥

कवित्त–काहे कौं करत मान सुंदरि सुजान तुव,
आनन्न विलोक कंज कानन विषा दूसौ ।
कंचन कुमद कांच कदली कुमाच वर,
केहर करीरु कलि कोकिलान ना दूसौ ।
हा हा हरिदेव की सौं दीन भई सोतैं सव,
लीन भयौ प्यारौ देख तेरो रूप जादूसो ।
कोकन कैं संक औ अदंक मृग मीननि कैं,
डोलत मयंक हू कलंक लै फिरादू सो ।।३३।।

अथ विरह निवेदन—

कवित्त–रावरे वियोग अलवेली वाल लालन वो,
विकल भई है पल कल न लहाती है ।
पौंन मैं भीनी मौंन भीतर परी है वीर,
चंदन तैं चादनी तैं चंद तैं डराती है ।
कहै हरिदेव ताके उसन उसासन सों,
जरवे के डर न सहेली ढिंग जाती है ।
नैंन घन धार वारि वरसैं अपार तोऊ,
हाय विरहागन की मार अधिकाती है ।।३४।।

अथ स्वयं दूतिका—

दोहा—जहाँ जु अपनौ आपही, करै दूत पन नारि ।
स्वयं दूतिका ताहि को, बरनत सुकवि उदार ।।३५।।

चोटत फूल गिरयौ मरा भाल को, हेर कैं हार गई सब आली ।
त्रासत सास की जाय सकैं न, लगै डर कुंज परी सब खाली ।।
आन अंध्यारी छई चहूँ ओर तैं, झूम लौं झूम रहीं द्रुम डाली ।
आईयै नैंक मया करकैं वलि, दीजियै ढ़ूढ हमैं वनमाली ।।३६।।

अथ षट् ऋतु वर्णन--

दोहा—ग्रीष्म पावस सरद हिम, पुनि कह सिसिर बसंत ।
ये षट रितु व्रनन करै, ये कवित्त सरसंत ।।३७।।

अथ ग्रीष्म—

कवित्त—मंदिर गुलाब के गुलाब दल सेज सज,
चंदन पलंग चारु चंदन चहू धा फैल ।
खासे खासे खस के हैं परदा दरीन दर,
अतर वगार वार बाहर जहाँ जौं गैल ।
तहाँ हरिदेव रचि राखी विपरीत रति,
मदन विनोद अंग सरस्यौ सुरंग अैल ।
छैल कौं न छांड़त हैं छिन हू छवीली छकि,
छाँड़ति छबीली कौं न छिनहू छबीलौ छैल ॥३८॥

अथ पावस—

कवित्त—कारे कारे भारे अतितम के पहाड़ ऐसे,
पूरव दिसातैं आज आवतु डरारे हैं ।
गाजत गंभीर सुन वीर न धरत धीर,
झरत मदनीर चैचलत पनारे हैं ।
कहैं हरिदेव पान चाव चारु चायनु सौं,
मान गढ दायनु की पैज कैं सिधारे हैं ।
वादरन वीर वलवीर की दुहाई यह,
मदन महीप के मतंग मतवारे हैं ॥३९॥

आयौ असाढ़ सो गाढ़ परी, दिल दाडतजी दुख कैसें भरैंगे ।
पापी कलापी चहूं दिस तें, कलि कूंज कैं ही को हुलास हरैंगे ॥
त्यौं जुगनू की चमकन सौं, हरिदेव कहो किम धीर धरैंगे ।
प्रीतम प्रान पियारे बिना, जब जेब दराव दराह करैंगे ॥४०॥

अथ सरद—

कवित्त—सरद महीपति नैं कीनौ है उछाहमन,
विश्व के विजै कौं सैन साजी एक जात की ।

फार अंधकार कौं अगार चंद जोधा चढ्यौ,
जौन्ह करवालि लैकें विरही के घात की ।
फूले फूल बान औ वंधू कैं अलि वृंद गोली,
रंजक पराग पौंन भाल वश्रु घात की ।
तासौं भाज वचवे कौं नीकौये उपाय एक,
बार बार वावरी बतावै तोहि चातकी ॥४१॥
तरुन तनूजा तीर सौरभ समीर तैसौ,
तैसी अलि भीर सोहै सुमन झुकट पैं ।
तैसी बृज गोरी रंग वोरिन की चारौं ओर,
नूपुर की झीनी द्रुत गत की उघट पैं ।
तैसी ताल वीन की नवीन हरिदेव कहै,
परम प्रवीननि के मन की रुकट पैं ।
तैसी चारु चंद की जुन्हाई सुखदाई अब,
तैसी छबि छाई है कन्हाई के मुकट पैं ॥४२॥
बिछुवा मराल मन मोहैं मुनिराजन को,
अंबर अमल दिपै तास की फरद है ।
पथक उरोज थाथी बांध उठ गौन लागे,
हौंन लागे सौतन के आनन जरद हैं ।
व्याकुल वियोग वडवागन तैं प्यारे जू के,
लोचन चकोरन कौं हरियै दरद है ।
आनन अमल इंदु इंदीवरनैंन फूले,
कीनी विध मैंन आज तोही मैं सरद है ॥४३॥
कंचन के खंभ औ दिवालैं छत्त छाजे बने,
कंचन की सोभित तिवारी चित्रसारी सी ।
पन्ननि के पल्लव फबे हैं फूल नाना मण,
विद्रुम की वेल पैं बनाई फुलवारी सी ।

आई है बिलोकवे कौं कीरति कुमार ताके,
अंगन की ओप तीनों लोकन की उजारी सी।
औरन कैं कातिक की मावस दिवारी रहै,
नंद जू के मंदिर मैं दिन ही दिवारी सी ।।४४।।

अथ हिमऋतु वरनन—

कवित्त—भाजो है ढुनी सौं औ दिसान सौं दिवाकर सौं,
दीरघ दरीन मैं सौं ह्वै कर अकैंठो है।
वारि निधि चारि मैं सौं कालिंदी धार मैं सौं,
गंगा के कछार मैं सौं मार मए हैठौ है।।
कहै हरिदेव मान त्रास हिम बिक्रम कौ,
गरम गुसाई ये बिचार करि अैठौ है।
अचल अभेद जीय जान प्रान प्यारी तेरे,
उन्नत उरोजन को कौट करि बैठौ है ।।४५।।

अथ सिसर ऋतु—

धायो है प्रवल प्रचंड वल दंडन के,
खंड नव मंड लीनो राज मुन दीप को ।
लूट लीनी संपत सकेलकैं सरोजन की,
भाग्यौ भयभीत ह्वै कै भान हरि जीप को ।
कहै हरिदेव परी संक मन कोकनिके,
लोकन अतंक वस कंप नव नीप को।
ढूढति फिरै है अब एरी ये वियोगिन कौं,
सिसर समीर जोधा मदन महीप को ।।४६।।

अथ फाग—

आई उत गोरी रस बोरी होरी खेलवे कौं,
इत मैं गुपाल भये ठाढ़े रस मस कैं।

छाई बहु धूमन सौं धूधर गुलालन की,
भींगे नंदलाल तामैं केसर के रस कै।
ता समैं सुजान तैनैं आन कैं अचानक ही,
वंदन सौं मीड़ौ मुख चंद बर बस कैं।
तो द्रिग गुलाल हरिदेब हस डार्यौ सो तो,
सोतिनकी आंखन मैं आज हू लौं कस कैं॥
आई बृज गोरी रंग बोरी होरी खेलवे कौं,
ठाड़े ब्रजराज इतै संग लै सखान कौं ॥
धूमन सौं धाय धाय गाय कैं धमारन कौं,
मंद मुसिकाय गहे कान्हर सुजान कौं।
कहै हरिदेव छूटे अमल अबीर बूके,
केसर गुलाब आब लागे सरसान कौं।
देखि यह फाग निज लेख वड़ भाग मानो,
भू कौ अनुराग बाढौ जात आसमानकौं ॥

अथ बसंत वर्नन—

कोकिल कपोल कुल कावल सिपाह कीनैं,
किंसुक कलंगीपोन अश्व चढ़ धायौ है।
राते राते पात ते पताका फहरात वर,
सुमन समूह सर पिंजर बनायौ है।
मान कढ गंजन मलिंद गज मत्त छूटे,
ऐसे समै कैसैं मतमान कौं सुहायौ है।
भूपति मनोज को चमूपति बसंत वीर,
कंत विमुषन पैं चमूह सज आयौ है ॥४६॥

कवित्त-पे न रितुराज की हैं वीर वनराज वेली,
राजै भीर वीरन की जंग रंग ओप्यौ है।

किंसुक न फूले ये पलीते जगे तोपन पैं,
सुमन सुगंध ये न विजै केतु रोप्यौ है ॥
फूले फूल वृंदन पैं डोलत मलिंद ये न,
मान गढ गंजन गयंद गन तोप्यौ है ।
आनंद की कंद चल वेग नंदनंदन पैं,
आज रति नाथ पति विमुखन पैं कोप्यौ है ॥५०॥

इति श्रीराधिकारमन चरनारविंद मकरंद पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम आत्मज कवि हरिदेवविरचितायां रसचन्द्रिकायां उद्दीपनभाव बरनन नाम अष्टमो प्रभा ।

अथ अनुभाव वर्नन—

दोहा—जो रस को अनुभव करै, सौ अनुभाव बखान ।
लीलादिक सौं होत है, ते दस भांति सुजान ॥१॥

अथ नाम—

लीला प्रथम विलास कहि, पुन विछ्छत्ति सुवखानि ।
विभ्रम किलकिंचति ललित, मोटायत पुनि जान ॥२॥
विव्वोक वहृत पुनि कुट्टमित, बरनैं सब कविराय ।
प्रगट सिंगार तियानके, उपजैं ये दस भाय ॥३॥

अथ लीला हाव लच्छन—

तिय पिय को पिय तिय को, रस मैं वदल भेष ।
तासौं लीला हाव कहि, वरनैं सुकवि अशेष ॥४॥

है पटपीत अनूप मनौ, रंग कंचन सौं छबि सिंधु झकोरो ।
वा मधुरी मुरली धुनि मैं, विध शुद्ध सुधारस सार निचोरो ॥
वांकी चितौन लषै हरिदेव जू, जातन ही चित कौन कौ चोरो ।
तीर कलिंदी कदंब तरै, हम लाल लखौ इक कान्हर गोरो ॥५॥

कटि पीतपटी फहरात मनोहर, औ लकुटी कर चारु लियैं।
सिर मोर पखा मुरली मुख बाजत, राजत है बनमाल हियै ॥
हरिदेव मनोज तरंगन सौं तन चंदन चित्र विचित्र दियै।
जमुना तट श्री वृषभानु सुता, बहरैं मन मोहन रूप कियैं ॥६॥

अथ विलास हाव लच्छन—

दोहा—चितवन, बोलन चलन मैं, अति हित की सरसान।
चित्त चुरावैं पिय कौ, सो बिलास जिय जानि ॥७॥

कंचन सौं तन केसर खौर, महा नक वेसर की छवि बाढी।
स्याम दुकूल हैं फूल के भूषन, कामिनी कोटि मनोज की दाढ़ी ॥
सोहत है अति ऊंचे उरोजन, कंचुकी चारु कसी अति गाढ़ी।
को है सखी यह मोहत मो मन, विज्जु छटासी अटा पर ठाडी ॥

कवित्त-कारे कजरारे अनयारे हैं विसारे महा,
दीरघ ढरारे आन कानंनि बिहारे हैं।
साँचे कैसे ढारे अति रूप के उजारे प्यारे,
सेत रतिनारे रति मद मतवारे हैं ॥
झूम झपकारे में निहारे हरिदेव की सौं,
उपमा न पाईयौं विचार कवि हारे हैं।
वारे सर मैंनके विलोक तव नैननि पैं,
कौन मृग मीन कंज खंजन बिचारे हैं ॥८॥

अथ विच्छिति हाव लच्छन—

दोहा—थोरेई सिंगार तन, सोभा बढै अपार।
विच्छित ताकों कहत हैं, कबि हरिदेव उदार ॥१०॥

कवित्त—चंपक लतासी कहू कैसैं तन ओप देखै,
गालब गुलावंन की आव जात धसकी।
चंचला चिराकन को चाहैं मद चूर होत,
चामीकर कूर होत पावै ओप मस की ।

नैंक हरिदेव ज्यौं हंसै तो झरैं फूल मानौं,
बातन मैं वहै ताकैं सरिता सी रस कीं।
पौढे पर जंक पैं मयंकमुखी लालनितो,
सेज को पिछोरा देत जेव जर कस की ॥११॥

अथ विभ्रम हाव लच्छन—

दोहा—करैं भूल रस मैं तहां, अचल विचल सिंगार।
विभ्रम तासौं कहत हैं, कवि हरिदेव उदार ॥१२॥

कवित्त-छांड़ि छांड़ि गेहन चली हैं गज गौनी तज,
संक गुर लोगन की कानि कुल खोलैं हैं।
जावक सुभाल पग अंजन लगाय कोऊ,
हारि कटि लाय मुसिकाय मृदु वोलै हैं
धार करि नूपुर अनूप हरिदेव की सौं,
ऐसे ही सुजानन सिंगार सजे सोलै हैं।
वैन नाद मादिक अधीन ब्रज गोरी भई,
वावरी लौं वीर बन वीथन मैं डोलै हैं।

अथ किल किंचित हाव लक्षन—

संग सखीन के इंदु मुखी, जमुना जल मैं करै वृंद विहारन।
ताई समै हरदेव अचानक, आये मनोहर मोद सौं धारन॥
हेर रुमावल टेर कहौ, उर सौं लपटी फनी देऊ विडारन।
सो सुन कैं करि दोऊन सौं, तिय चौंकी चकीझिझिकी लगीझारन॥

अथ ललितहाव लच्छन—

दोहा—वोलन चलन चितोन मैं सोभा अति सरसान।
ललित हाव ताकौं सवै, वरनति सुकवि सुजान ॥१५॥

कवित्त-लटिक लटिक चली पहर चटकीले पट,
उपटी अछेद आभा ससि तैं निराली सी।

सुमन सुवासन तैं सरसी सुवास तन,
धाये हैं अलिंद तज कंज वन ताली सी ॥
देखी हरिदेव चल आज वन वीथनि मैं,
डोलत चहूघा रसराज की प्रनाली सी ।
पायन की लाली छित छाजति निराली छाव,
नखन उजाली परैं मोतिन की जाली सी ॥१६॥
कवित्त–सुरंग दुकूल ते पतिका फहरात आगैं,
मलय मलिंद प्यादे दोरत जुहीम है ।
रूप षरसान पैं सम्हार द्रिग'बान लीने,
भृकुटी कमान कीनैं तरकस सुहीम है ॥
मानस तुरंगन पै उन्नत उरोज भट,
संग हरिदेव दल दिल के तुहीम हैं ।
गौंन गजराज दै कैं नूपुर निसान आज,
मदन महीप कीनी कापर मुंहीम है ॥१७॥

अथ मोटायत हाव लच्छन—

दोहा—पिय देखत ही जव तिया, लै अगराय जम्हाय ।
कवि हरिदेव बखान ही, सो मोटायत हाय ॥१८॥

वह कंचन की लतिकासी अनूपम , जात डुलावत ही वहियां ।
रत आय कढ्यौ वह नंद को नंदन, दीठ परी तहि के पहियां ॥
हरिदेव जू आय हरैं मुसकाय कै, डारी जवैं गल मैं बहियां ।
थक नैंन रहे तिय के ओ, लगी जक एक यही नहीया नहिया ॥१६

अथ विब्बोक लक्षन—

दोहा—जोवन मद सौं पीय कौ करैं अनादर बाम ।
कहै हाव विब्वोक सो, देखि ग्रंथ अभिराम ॥२०॥

मागत दान फिरो वन मैं, भले कान्ह सुजान जू ओ लियैं ओडै ।
लाज न आवत नैंक तुम्हैं हो, ग्वाल के ग्वाल कहैं कहा जोडैं ।

जैहैं लिवाय अबै नृप कंस पैं हाथ लगाय भलैं पुनि छोड़ैं ।
आय भरो नित भावरी सी, यह सामरी सूरत कामरी ओढै ।।२१

अथ विकृत हाव लक्षन—

दोहा—बोल सकैं नहीं लाज सौं, बचन पीय ढिग वाल ।
ताहि कहैं हरिदेव कवि, विकृत हाव रसाल ।।२२।।

है हिय मैं टटकी वनमाल, सौं भाल पैं वंदन विंद नवीनौ ।
पीत पटी फहरावत सुंदर, मोर किरीट झुक्यौ रंग भीनौ ।।
वाही कौ रूप अनूप लषै, रति के पति को मद होत है हीनौं ।
सो ब्रजराज मिल्योरी भटू, पर लाज निगोड़ी न देखन दीनौं ।।२३

अथ कुट्टमित हाव लक्षन—

दोहा—जहाँ केलि मैं पीव सौं, झूंठे झुकैं जु तीय ।
तहाँ कुट्टमित हाव कहि, बरनैं कवि कमनीय ।।२४।।

कवित्त—चांप चाप चंपावन चामीकर चूर कीनौ,
चंचला चिराकन के जात मद जीकौ हैं ।
अंचल के ऐचैं कीनैं चंचल द्रिगंचल तैं,
छूवत उरोजन कौं कीनौ मुख फीकौ है ।
चुंवन मैं चौंक चौंक भाजी हरिदेव तोऊ,
नैंक न सनेह घट्यौ मोहन के ही कौ है ।
हीकरन एरी यह दीह दुख सोतन कैं,
सीकरन तेरौ कैं वसी करन पीकौ है ।।२५।।

इति श्रीराधिकारमन पादारविंद पानानंदित अलिंद श्री रतीराम आत्मज कविहरिदेव—विरचितायां रसचन्द्रिका यां अनुभाववरनने नाम नवमो प्रभा ।
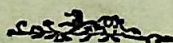
अथ सात्विक भाव लिख्यते—

दोहा—संबंध रूप रत त्ततैं, लंहियै कछु विबधान।
भाव विबस जो चित्त है, सात्विक ताहि वषान ॥१॥

सो सात्विक के आठ प्रकार भेद—

दोहा—स्थंभ श्वेद रोमांच कहि, अरु सुरभंग वषान।
कंप विवर्नक अश्रु कहि, प्रलय अष्ट ये मान ॥२॥

अथ स्थंभ लच्छन—

दोहा—सब सारीरिक धर्म के, होत होय गतिरोध।
तन संग्या कंपादि बिन, सो स्थंभ प्रबोध ॥३॥

लै जमुना जल कौं नव नागर, आगर रूप महा छबि बाढ़ो।
चाहै धरा तैं धरो सिर पैं करि लै कटि तूल करी अति गाढी ॥
दीठि परे हरिदेव अचानक, अंग अनंग की आग सौं दाढ़ी।
घाट धरी न धरी गई सीस पैं, रहि गई गागरि हाथ लैं ठाढ़ी ॥४॥

अथ स्वेद लक्षन—

दोहा—हर्षादिक तैं होत जहि, तन प्रस्वेद कण आहि।
स्वेद ताहि को कहत हैं, जे प्रवीन कविराय ॥५॥

आपने भौन पैं प्यारी चढ़ी, सुत आपने भौंन चढ़े जसुधा के।
दीठि सौं दीठि गई मिलियों, उर सौं उमड़े जनु मेघ मुदा के।
सोइ रहे थिर ह्वै हरिदेव कैं, शोभित सार सबै बसुधा के।
है मुख पै श्रम के कनिका, किधौं चंद के मंडल वृंद सुधाके ॥६॥

अथ रोमांच लक्षन—

दोहा—हर्षादिक तैं होत जँह, रोमन को उत्थान।
पुलकित होय सरीर तँह, सो रोमांच बखान ॥७॥

न्हाय कैं नागरि संग सखीन के, ज्यौं जल तैं कढि बाहर आई।
ओढन चीर लगी तब ही, उत मैं नद नंदन बैन बजाई ॥

त्यौ पुलिकाल बढ़ी तिय कैं, तन सो उपमा हरिदेव जू गाई।
मानौ खुले पट सिंभु के जान, फनी अति आतुर पूजन आई ॥८॥

अथ सुरभंग लच्छन—

दोहा—हर्षादिक तैं होत जहि, गद गद गिरा सुजान।
सुर सुभाव तैं जो, सो सुरभंग बषान ॥९॥

तो मुख तैं सजनी सुनिकै, गुनि देखन कौ अति जो अकुलायौ।
आज अचानक ही मग में, मिल्यौ मार सौं नंदकुमार सुहायौ।
री मुसिकाय कैं नैंक तबै, उन मोहनी मंत्र सो बैन सुनायौ।
चाहौ कछू कहिबौ हम हू, कहि आयौ कछू न हियौ भर आयौं ॥१०

अथ कंपा लच्छन—

दोहा—होत हर्ष भय आदि तैं, सब सरीर मैं कंप।
ताहीं कौं हरिदेव कवि, कंपा सात्विक जंप ॥११॥

आई अन्हावनु पाय लग्यौ, यहि वायु हू वैरी भयौ बजमारौ।
री इत मैं उघर्‌यौ मुख जात, खड़ौ उत देखत नंद दुलारौ।
आज लौं काहू लखी अगुरीनहू, हौसरहौ न नदेउ बिचारौ।
कीजै कहा अबरी सजनी, करि कंपत चीर न जात सम्हारो ॥१२॥

अथ वैवने लक्षन—

दोहा—कछू विकार तें होत जहि, वनें और तें और।
ताही कौ वैवने कहि, वरनौ कवि सिरमौर ॥१३॥

वैठी हुती सजनोनिमैं सुंदरि, तीनहु लोकन की छवि छाई।
ता मग ह्वै कढे वैन वजावतु सो सुन कें कढि वाहर आई।
फूल सिंगार किये हरिदेव कौं, देखत ही मन में अकुलाई।
छाय गई सियराई सवै तन, आय भई मुख पै पियराई ॥१४॥

अथ अश्रु लक्षन—

दोहा—हष विषादादिकन तैं, प्रगटै लोचन नीर।
सात्विक अश्रु वषान सौं, कहै सकल मतिधीर ॥१५॥

भोर ही न्हाय कैं इंदु मुखी, तब हाथ सखी के फुल्लेल मगावा ।
वैनी गुंदावन बैठी तहाँ, कर कंज लियै नंद नंदन आवा ।
देखत ही द्रिग वारि भरयौ, हरिदेव दुहू करि सों सो दुरावा ।
मानहु सची दिवेंद्र की पाय, कीयौ अरविंद नें इंदु पै दावा ॥१६॥

अथ प्रलय लक्षन—

दोहा—हर्षादिक तैं होत जहि, निष्ट चेष्टा ज्ञान ।
रहै न कछु सुध देह की, ताकौं प्रलय वषान ॥१७॥
जी है ज्यौं जी है अवै, श्रीवृषभानु कुमार ।
ना तर विष पीयैं सवै, नंद महर के द्वार ॥१८॥

इति श्रीराधिकारमन पदारबिंद—मकरंद—पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम आत्मज कवि हरिदेवविरचितायां रसचन्द्रिकायां सत्विकभाव वर्नने नाम दसमो प्रभा ।

रूप लक्षन—

दोहा—अंतर तैं उपज्यौ जु है करि सब रसन संचार ।
कै सब रस मैं मिल रहै, सो संचारी धार ॥१॥

सो संचारी तेतीस विधि—

कवित्त-निर्वेद औ गिलानि संका औ असूया मान मद,
श्रम अरु आलस औ दैन्यता बखानियै ।
चिंता मोह स्मृति बरनत धृति लाज अरु,
चपलता हर्षरु आवेग उर आनियै ।
जड़ता अरु गरव विषाद औत्सुक्य निद्रा,
अपस्सार सुप्त बोध आमर्षन जानियै ।
अवहित्था उग्रता सुमति व्याधि उनमाद,
मरन त्रास तरक ये तेतीस मानियै ॥२॥

अथ निर्वेद लक्षन--

दोहा--तत्व ज्ञान अपमान तैं, आवै जिय वैराग ।
तासों नर्म गिरादि ह्वै, सो निर्वेद समान ।।३।।

चाल्यौ नहीं रथ कै पथ हौ, पथ तीरथ के चित दै नित चाल्यौ ।
चाल्यौ न वेदना सासन मैं, जग वेदना सासन मैं जिय घाल्यौ ।
घाल्यौ न दीनहू कौं किनका, किनका कन कौ मण दीन ज्यौं पाल्यौ
पाल्यौ न नेह कभी हरि सों, हरिषा जो वृथा विस वासर पाल्यौ ।।

अथ गिलानि लच्छन--

दोहा--रति श्रम गति तृष्णादि तैं, व्याकुल होय शरीर ।
कंपादिक ता माहि है, सो गिलानि मतिधीर ।।५।।
तीक्षन तरल कटाक्ष सर, मारे विसष कराल ।
जब तै सुध न शरीर की, परे लाल बेहाल ।।६।।

अथ संका लक्षन--

दोहा--नृप अपराधादिकन तैं, होय संक उर आन ।
कंठादिक सूखै तहाँ, संका ताहि बषान ।।७।।
उदा०-करन गहौ कर देखियै, अपने हिय अनुमान ।
गाम चवायनु सौं भरो, जान दोऊ पिय जान ।।८।।

अथ असूया लक्षन--

दोहा--पर संपत कौ देख कैं, दोष दिष्ट हिय होय ।
तब दोषारोपन करै, जान असूया सोय ।।९।।

कवित्त-कोमल कमल कर कंजन गुहे जे हार,
तहाँ जोग मेली नाद रसना क्यौं कूजियै ।
सुंदर सनेह रस सींच सींच पाली देह,
ताकौ राख येह मन कैसे कैं अमूजियै ।।
ये तो बिरहाग मैं जरै हौ बृज देस अब,
तापर अदेश आग प्रगटी ये दूजियै ।

कूबड़ी कौ भोग जहाँ जोग बृजबालिन कौ,
हाय हाय ऊधौ कहा ऐसी उन्हें बूझियै ॥१०॥

अथ मद लक्षन—

दोहा—मद्यादिक तैं होत जहि, हिय मैं हर्ष उदोत।
सिथिल चाल अलि बल बचन, कढै तहाँ मद होत ॥११॥

कवित्त-राखे हैं डारि वीर जुलम जाल जोवन के,
जाहर जहूर है वसीया रस कूप के।
मंद मुसकान की बिलंद हरिदेव फासी,
तीखन कटाच्छ सर बोरैं विष रूप के।
छाके प्रेम मद सौं विमद वारि नीकौ करै,
याके चाह एक मग प्रीतम अनूप के।
काननि की ओट ह्वै कमान कसैं ठाढ़े वीर,
तेरे नैन एरी ये अहेरी मैंन भूप के ॥१२॥

अथ श्रम लक्षन—

दोहा—सुरतादिक बिवहार तै, अति ही थाकत गात।
जंभादिक ता माहि है, सो कहि श्रम अवदात ॥१३॥

प्रात उठी रति रंग किये पति, संग जगी तिय चारहू जामहि।
देषत आरसी सौं अपने, करि पौहची बनी मुकतान की तामहि।
ऐसे फवी छवि सौ हरिदेव जू, वैर निदारन के हित कामहि।
बाध सतारक तारन मैं, अरविंद करै मनु इंदु के सामहि ॥१४

अथ आलस लच्छन—

दोहा—कारजादि के करन मैं, कायरता अति होय।
उत्थानादि असक्ति जहि, सो आलस कवि लोय ॥१५॥

बाल उठी रति रंग किये, अंग अंग सिंगार भये अति ढीले।
टूट रहे मुकतान के हार, सम्हार कछू न दियैं छद गीले ॥

आलस सौं जमुहात खरी, अगराति उठे कुच यौं अरवीले।
चाहै उड़ाँजन कंचन भूमि सों, भूप मनोज के वाज रंगीले ॥१६॥

अथ दैन्यता लक्षन—

दोहा—भावतु वस्तु अलभ्य तैं, दुख कौ होत उदोत ।
निकसैं दीन गिरा जहाँ, भाव दैन्यता होत ॥१७॥

बैरी भये पशु पंछी सवैं, अरु फूल करैं दुख मारत मार है।
सो सहि है हम तौ सब ऊधौ जू, कहियौ कछु मति नंदकुमार है।
पियौ दधागन कौ तौ कहा, अरु ह्वै है कहा करि ज्यौ गिरधार है।
जारन कौ विरहाग वढ्यौ, खुदवोरन को प्रगट्यौ द्रिग वार है ॥

अथ चिंता लक्षन--

दोहा—जहाँ कौन हू बात की, चिंता हिय अधिकाय ।
चिंता तासौ कहत हैं, कवि पंडित समुदाय ॥१६॥

गौन सुनौ मन भामन कौ, मन भामनी प्राननि गौन सौं कीनौं ।
देखैं न वोलैं न सुनैं न कछू, रुख रूखो कीयो मन मोन सौं लीनौ।
बैठ रही कर पै धर आनांन, चारु बिचारन मैं चित दीनौ ।
देखि सनाल मनौं अरविंद के, ऊपर इंदु नैं आसन कीनौं ॥२०॥

अथ मोह लच्छन--

दोहा--होत तहाँ दुष्यादि तै, व्याकुलता चित आन ।
काज अकाज विचार नहि, ताकों मोह बषान ॥२१॥

जाति हुती इत राधिका नागरि, री उत वे मनमोहन ठाढ़े ।
दोऊन दोऊ गए लषि मोहन, नहि कछू सुधि जो सुख बाढ़े ॥
एरी जके से थके से रहे, हरिदेव सके से सबै अग जाडे ।
मैन चितेरे मनो छवि पत्र पै, चित्र विचित्र दोऊ लिखि काढ़े ॥२२

अथ संमृत लच्छन---

दोहा—जहाँ अवर्न देखि कैं, वर्न याद ह्वै जाय।
तब तासौ अस्मृत कहैं, कवि हरिदेव सुहाय ॥२३॥

जारति अंग अनंग की आग सौं, चैत की चांदनी चंद महान की ।
कोरन जोर किये उपचारन हारी विचारी सहेली सुजान की ॥
व्याकुल बालै लिवाय गई सज, सौंज सरोवर के तट न्हान की ।
दूनी दवाग बढी तियकैं, तन देख दसा चकवी चकवान की ॥२४

अथ धृत लच्छन—

दोहा—दुख कौ सुख करि मानवौ, धीरज धरिवौ चित्त ।
तासौ ह्वै सुचितादि तन, सो धृत जानहु मित्त ॥२५॥

स०–रे मन साहसि साहस राख, सु साहस सौं हिय मोद लहैगो ।
तेरौ विचारौ न ह्वै है कछु, करि है हरि आपहि जोई चहैगो ।
है यहि एक मतौ हरिदेव कौ, देव अदेव जो कोऊ गहैगो ।
जो न रह्यौ थिर ह्वै सुख वो, अब त्यौ दुख हूथिर ह्वै न रहैगो ॥

अथ चपलता लच्छन—

दोहा—अनुरागादिक तैं तहाँ, थिरता रहै न चित्त ।
अति आतुर ह्वै जात मन, भाव चपलता मित्त ॥२७॥
मन मोहन सौं मन लग्यौ, घर अंगना न सुहाय ।
थिर न रहै थिरकी फिरै, फिरकी लौ दिन जाय ॥२८॥

अथ हर्ष लच्छन--

दोहा—तहाँ कौन हू हेत सौं, उर उपजै आनंद ।
प्रगटे पुलक प्रश्वेद जह, हरिष कहत कविवृंद ॥२६॥

बैठी हुती सजनीन तैं सुंदरि, सोचन मैं सब गात सुखाने ।
बात कछू कहि जात नहीं, हिय के सब हास हुलास हिराने ॥
आये पिया हरिदेव विदेस तैं, काहू कहै वच ये रस साने ।
फूल उठे ललना के विलोचन, औंर सखीन के नैन सिराने ॥३०॥

अथ आवेग लच्छन—

दोहा—नेहादिक तैं होत जहि, अति संशय उर आय ।
संभ्रत मय विवहार सब, सो आवेग कहाय ॥३१॥

कवित्त-कैधौ रूप छोना के है खेल के खिलौना खूब,
कैधौ भरे टोना करै जंत्र है दिवारी के।
कैधौ हरिदेव दो है मीन ससि मंडल पैं,
बिछुरे पयोध रस राज सुखकारी के॥
कैधौ छूट भाजे हैं कुरंग इंदु जानति सौं,
कैधौ हैं तुरंग मैंन भूप की सवारी के।
कैधौ तीन गुन के बनाए बिधि खंजन द्वै,
कैधौ मनरंजन ए नैंन हैं बिहारी के ॥३२॥
बैठे रंग महलै उमंग भरे आनद सौं,
अंग की अछेह यों तरंग उफनात है ।
दै कै गलबाहें नैंन नंन सौं मिलाय यौंस,
राहै रूप दोऊन कौ दोऊ बतरात हैं।
देखौ हरिदेव तौऊ प्रेम की बिचित्रताई,
बिरह विथा मैं छिन छिन अकुलात हैं।
हाय प्रान प्यारे कहि सांस लेत प्यारी पुनि,
हाय प्रान प्यारी कहि प्यारौ रहि जात है ॥३३॥

अथ जड़ता लच्छन—

दोहा—देख अभामत बस्तु कूँ, जड़ ह्वै जाय सरीर।
सब विवहारन रहित जो, सो जड़ता मत धीर ॥३४॥

देखत दिष डसी इन लाल की, ख्याल ही ख्याल करी अब येरी।
है लकुटी कहु कामरिया, मुरली वनमाल परी वनवेरी ॥
ऐसी कछू हरिदेव की सोह, कपोलन पै मचली दियैं फेरी।
जादू भरी कै भरी विष सौं, लट तेरी किधौं अहि भामन येरी ॥

अथ गर्व लक्षन—

दोहा—बुद्धादिक तै आप कौ, सब तै अधिकौ जान।
वैभव निंदै और ताकौ गर्व बखान ॥३६॥

ऊधौ जू जोग दीयौ मन मोहन, सो हम लै निज सीस चढावै ।
चंदन औ घनसार हू दैं, जिय जान कैं सार विभूत लगावै ॥
ऐ पर एक अदेसौ इतौ, हम सो कहि तैं जिय माहि लजावै ।
राधिका नाथ कहाय धौं हाय, कहा हरि कूबरीनाथ कहावै ॥३७॥

अथ विषाद लक्षन—

दोहा—वस्तु भामती हानि तै, निज अनिष्टता मानि ।
चित मैं वढ़ै विषाद जहि, सो विषाद जिय जानि ॥३८॥

नीति विधान अनीति गई करि, रावरी प्रीत की रीत हवासी ।
आनद के घन दीने उड़ाय कैं, सोच के घन कीने मवासी ॥
हाय हितू हरिदेव सुनौं, पजरै छतिया दिन रैन अवासी ।
जो रस नेह कौ तोर चले अब घोर चले विस ह्वा विसवासी ॥३९

दोहा—जिहि असहनता समैं, किये मादिक तै होय ।
तन्द्रादिकता माहि ह्वै, औत्सुक है सोय ॥४०॥

कवित्त–काऊ कह्यौ आनकैं आयौ है विदेशी पीय,
सुनतैं ही तीय हीय बढ़ौ है हरस सौं ।
कहै हरिदेव हरवरात उठ धाई देखि,
दूर ही तैं दोर द्रिग कीनो है परस सौ ।
ज्यौं ज्यौं प्रान प्यारो बूझै कुशल हित जन सौं,
त्यों त्यों होत आतुर उर अंतर तरस सौ ।
आवत नहीं आवतु मैं मोहन के मोहनी कौ,
एक ही छिनक भयौ बिधि के बरस सौ ॥४१॥

अथ निंद्रा लच्छन—

दोहा—सब इंद्रिन को त्याग मन, त्वचा मांहि ठहराय ।
ह्वै सुपनादि अनेक तहि, निंद्रा कहियै ताय ॥४२॥

माई मिलै सपने मैं मया करि मोहन मेरी गही हंसि ठोड़ी ।
मोच कै नीवी सु कंचुकी खोलत माल सखी मुकतान की तोड़ी ॥

मैं हू वियोग बरायवे कौ भई, नेसक, बाट सकोच नै छोड़ी ।
हायरी तौ लौ विलाय गई, वहु नीदहू नीद न जोग निगोड़ी ॥४३

अथ अपस्मार—

दोहा—वातादिक ग्रह कोप तैं, देवादिक आवेस ।
तजै फैन भुव पात मुख, अपस्मार कंपेस ॥४४॥

कवित्त-सुनतें ही तान सुध भूल गई प्रानन की,
आयौ मुख फैन पैन आवतु है सासुरी ।
गिरी अकुलाय देखि आई बृजबाला धाय,
कहा भयौ हाय हाय धधकति है पासुरी ।
हा हा हरिदेव मोहि ऊतर विचारि दीजै,
रावरे के पानिन मैं पावत हुलास री ।
बालन के मारिवे कौं बीर बृज मंडल मैं,
बान है कै बरछी ये बिष है कै बासुरी ॥४५॥

अथ सुप्त लक्षन—

दोहा—जाय बुद्ध मन की जबै, त्वचा माहि ठहराय ।
अतसै बिनु सुपनादि जहि, सुप्त कहत है ताय ॥४६॥

उदा०-सोवत जमुना तीर हरि, तँह आई बृज वाल ।
कोऊ मुरली उर ली धरी, हरी कोऊ बनमाल ॥४७॥

अथ विवोध लच्छन—

दोहा—नींद छूटवे ते जु है, इंद्री परम प्रकास ।
तामैं भूक्षेपादि है, सो विवोध बुधरास ॥४८॥

कवित्त-भोर उठ आई केलि मदिर दुवार प्यारी,
आलस वलित नैन देखि मृग हहरै ।
उन्नत उरोजन पैं विथुरे विराजैं वार,
टूटे मणि हार खुटे चीर अंग फहरै ॥

तैसे हरिदेव राजै आननि प्रस्वेद वृंद,
सुषमा विलोक उठी उपमा की लहरै ।
कैधौ अरविंद पैं है वृंद मकरंद के ये,
कैधौ चारु चंद पैं सुधा के वृत छहरै ॥४६॥

अथ अमर्ष लच्छन—

दोहा—अपमानादिक तैं तहाँ, हिदै कोप अधिकाय ।
अरुन नैंन करि तरजिदौ, ताहि अमर्ष बताय ॥५०॥

कवित्त—कोऊ कहै पंकज पै मधुप पराग पाग्यौ,
तिनकी तौ भोरी मति ऐसे ई भ्रमाई है ।
कीनौ हैं बिचार निरधार एक मैंने मुख,
रावरे की रचना बिध रुच सौं बनाई है; ॥
ताके सम होयवे कौं फूलौ बड़े भोर हीं सों,
ऐसौ मतिमंद जाकी जान कुटिलाई है ।
कोप कर बिधि नैं अलिंद मिस प्यारी अर,
विंदन के आनन पैं कारिख लगाई है ॥५१॥

अथ अवहिथा लक्षन—

दोहा—कछु मिस करकै अपनौ, मरम छिपावै कोय ।
संगोपन आकार करि, करि अवहिथा है सोय ॥५२॥

इंदु मुखी मुख इंदु निहारत, आई सखी इक पूछन ताकौ ।
आज कहा अधराटक टोवत, भोर ही तैं उठ आरसी ताकौ ।
रात किए गल के अधरा, छद है री महा सजनी दुख जाकौ ।
क्योंरी सखो रति मैं पति के, रद नाहिरी वीर समीर महा कौ ॥

अथ उग्रता लक्षन—

दोहा—दुरजनादि तैं होत जहि, निरदैता अति चित्त ।
बंधनादि कीजै जहाँ, जान उग्रता मित्त ॥५५॥

कवित्त—ऐठी ही रहत बैठी जात डर वलिन के,
सैठी ऐसी घोर घन सात पनिहारी की।
भै दै देति हियौ कियौ मोहन अधीन जातै,
दीन भई गोपी गाम गोकुल मझारी की॥
तापर अनीति देखौ भीत न करत नैक,
डारी गहि जाल जोर वारी कुल न्यारी की।
ज्यों ज्यों बृषभान की दुलारी प्यारी प्यारे की तौ,
काढ़ौगी मरोर आज वंसी वजमारी की॥५५॥

अथ मति लक्षन—

दोहा—बहुत सास्त्र चिंतन किये, होत यथारथ ज्ञान।
तामैं अति चातुर्जता, अनय विनय मति जान॥५६॥

जन प्रीत प्रतीत न जानै कछू, गुन औगुन वाम कुवाम के जे।
निस वासर सोच सनेह रहै, धन धाम धरा तन ताम के जे॥
तजरे मन संग सदा जिनको, जग नीच निकाम न काम के जे।
बिन दाम गुलाम न रामहू के, मिलै दाम गुलाम गुलाम के जे॥

अथ व्याधि लच्छन—

दोहा—बिरहादिक संताप तैं, गात क्षीन अति होय।
दुख अधिकाय सरीर मैं, व्याधि बखानै सोय॥५८॥

नेह लगाय अनेह भये कित, गेह सुतन यौ तन छीजियै।
देह पर्यौ बिरहागन मैं, पजरै दिन रैन कभू सुध लीजियै।
हा हा हितू हरिदेव हमारी, इति विनती चित दै सुन लीजियै।
आस लगाय निरास करौ, जिन दै बिसवास बिसानन कीजियै॥

अथ उन्माद लक्षन—

दोहा—बिरहादिक तैं होत जिहि, बिन बिचार आचार।
वृथा बोलवौ दौरिवौ, सो उन्माद बिचार॥६०॥

कित बैन बजाई बुलाई लला, अब ज्यौं हम सौ न हियै हित हौ ।
हित हौ तौ गए कित छोड़ जहां, बिललात फिरै वन मैं चित हौ ॥
चित हौ जू इहा हरिदेब इतै, हमरे पिय प्रान तुम्ही वित हौ ।
वित हौ दुख दीन दयानिध ये, कित हो कित हो कित हौ कित हौ ॥

दोहा—मरन भाव बरनें नहीं, रस मैं बुद्ध निकेत ।
सूरन को मरवो कहै, जस विस्तारन हेत ॥६२॥

कविता-क्रुद्धित ह्वै जुद्ध मैं विरुद्धे जब उद्ध वीर,
देख महाधीर कौ धीर हू भड़गो ।
कहैं हरिदेव दिगपालन कैं सक्क पड़ी,
धक्क लोक पालन कैं सोक सिंधु मड़गो ॥
सेस भुज दंडन सौं छूटै जे प्रचंड बान,
प्राननि को अंत जानि जुद्ध वीर अड़गो ।
भानकुल भूषन के रेषितही इंद्रजीत,
भेद भांन मंडल कौ छेह पार कढ़गो ॥६३॥

अथ त्रास लच्छन—

दोहा—देख भयानक वस्तु कछु, डर हिय मैं अधिकाय ।
कंपादिक ह्वै ता समैं, त्रास ताहि कौ गाय ॥६४॥

कवित्त-छाड़ कै मथानी नैंक आई हौ जहाँ लौं वीर,
तौ लौ उतकोति कीनै कौतिक से काढ़े हैं ।
लै लै नवनीत कौ पुनीत मुख मेल मेल,
चक्रत चितौन मैं अनूप रूप बाढ़े हैं ।
देख प्रतिबिंब मणिखंभ मैं डराने जासौं,
हा हा खात जोरे कर दीन भये ठाढ़े हैं ।
आऊरी इहां लौं दुर देख वौ दिखाऊ तोय,
सूकत से संकित सैं कंपत से ठाढ़े हैं, ॥६५॥

अथ तर्क लक्षन—

दोहा—कछू पदारथ देखिउ, संसै बढ़ै अपार।
बहु बिचार मन मैं करै, सौ वितर्क निरधार ॥६६॥

कवित्त—कैधौ नव नागरि के उन्नत उरोज दोऊ,
कैधौ हिम हेम कूट सोभ सरसाने हैं।
कैधौ कुंभ कंचन के पूरत सिंगार रस,
कैधौं जुग सिभु एक ठोर दरसाने हैं।
कैधौ हरिदेव मैंन भूप के सिकारी वाज,
पीमन कुही की ताक लाग कै लुकाने हैं।
कैधौं कलि कुंचन की अवनी अनूप पर,
जोवन महीप नैं सिमाने दोय ताने हैं ॥६७॥

इति श्रीराधिकारमनपदारविंद पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम आत्मज कवि हरदेवविरचितायां रसचंद्रिकायां संचारीभाव वरनने दशम प्रभा।

अथ अस्थायीभाव लक्षन—

दोहा—कबहू काहू भाव सौं, होय न जाकी हार।
सब भावन सिरमौर है, है अत्रीय विकार ॥१॥
जाय नहीं रस वीज है, यही बढ़ै रस होत।
जैसैं तरु बीज सों, तरु को होत उदोत ॥२॥

सो अस्थायी भाव नव प्रकार—

दोहा—रति हांसी अरु सोक, पुन क्रोध उतावरु भीति।
निंदा विस्मै ओर सम, स्थाई भाव प्रतीति ॥३॥

अथ रति लक्षन—

दोहा—इच्छा प्यारी वस्तु की, देखनादि तैं होत।
मन विकार पूरन जहि, सो रति भाव उदोत ॥४॥

मुसक्यान की फासी सु जान दई, सो लई मति यौ चख चाहि पगे ।
मधुरे सुर डार चली भुरकी, मुरकी फिर वान से नैन लगे ॥
अब है सुध तोय कछू सजनी, सो चवायनु के चित चाय खगे ।
डगिपा यह रूप अनूपम है ब्रज ठाकुर ठीक ठगेसो ठगे ॥५॥

अथ हास्य लच्छन—

दोहा—लीला करि कीजै जहाँ, वचन वेष विपरीत ।
मन विकार पूरन न ह्वै, हास स्थाई मीत ॥६॥

खेलत फाग सुहाग भरे, अति भाग भरे अनुराग महारी ।
छीन कैं पीत पटी हरिदेव, हंसी मुरकैं वृषभानु दुलारी ॥
फेर लई पिचकी झुक यौं, मिल दीठ सौं दीठ गई सुखकारी ।
लाल के हाथ गुलाल रहौ, अरु वाल के हाथ रही पिचकारी ॥७॥

अथ सोक अस्थाई लक्षन—

दोहा—मिलै अभामत बस्तु जहि, होय भामती भंग ।
तासौं मनो विकार कछु, सोक भाव पर संग ॥८॥

आवतु गाय गुपाल जहाँ, मग जाय पर्‌यौ अघहू मुषवाई ।
जानैं कहा बृजवासी बिचारे, समाय गये सगरे तिय माई ॥
जात जरे जठरानल मैं, वल हूजियैं वेग सहाय कन्हाई ।
ऐसे सखान की टेर सुनैं, करुना कर कौ करुना कछू आई ॥९॥

अथ क्रोध अस्थाई लच्छन—

दोहा—अपमानादिक तैं तहां, प्रतिकूलन मैं आय ।
पूरन मनो विकार नहिं, क्रोध भाव सो गाय ॥१०॥

आयो है प्रात पिया रमनी घर, रात कहूं अनतैं रति कीनी ।
ओठन अंजन रेख लसै, अरु भाल पैं जावक लीक नवीनी ॥
कोप बढ़्यौ तिय के उर मैं, पिय जान कही बतिया रसभीनी ।
मार भलैं अरविंदन की, बृजचंद कैं चंदमुखी तव दीनी ॥११॥

अथ उत्साह स्थाईभाव लक्षन—

दोहा—सूरतादि तैं होत नहिं, पूरन मनो विकार ।
सो उत्साह वखानियै, हेत अपूरन धार ॥१२॥

उदा०-धेनु चरावत कृष्ण वन, गोपालन के संग।
वत्सासुर कों देखि कैं, चढ़ी अरुनई अंग ।।१३।।

अथ भय स्थाई लच्छन—

दोहा—घोरादिक धुन श्रवन सुन निज अपराधै देखि।
मन विकार पूरन न ह्वै, सो भय भाव विशेष ।।१४।।

आवै दिसा विदिसान कौ दाहत, ह्वै कै प्रचंड भयानक भारी ।
सेस मुषानल की लपटै, जनु जार न जात अकास की झारी ।।
कीजै कहा हरिदेव हहा, लखि होत हिंयै अकुलाहल भारी।
वारी कहा वच है भज कैं, किन वारी दवागन ये वनवारी ।।१५।।

अथ निंदा अस्थाई लच्छन—

दोहा—जहाँ अभामत वस्तु के, दरसनादि सौ होत ।
पूरन मनो विकार नहिं, सो भै भाव उदोत ।।१६।।

उदा०-प्रगट भई तव तीर तैं श्रोतन भरी उछाह।
चढी तरुनिया रुंडकी, जोगनि भरी उछाह ।।१७।।

अथ बिसमय लक्षन—

दोहा—देखनादि आश्चर्य, सुमरनादि सौं होत।
पूरन मनो विकार नहिं, विसमयभाव उदोत ।।१८।।

धाये हैं घोर प्रलय के महाघन, आय सबै सो इहाँ जुर भूमैं।
कोर उपाय किये बृज बोरन, छोर दिये धुरता धुक धूमैं ।
धार लियौ छिगुनी पैं लला, गिर नंद के मान सुरेंद के तूमैं।
सात दिना पर्यौ मूसलधार, फुहार न एक परी बृज भूमैं ।।१९।।

अथ सम स्थाई लच्छन—

दोहा—धन दारादिक नास तैं, उपजै कछुक विकार।
सम स्थाई भाव सौं, वरनत सुकवि उदार ।।२०।।

कवित्त-कंचन के वासन की वास ना सुहात अब,
कलित कदंबन की कुंजन को जोऊगो ।
गिलम गलीचे गुल गादी गरुर तजि,
पावन पुलन रैन आनंद समोऊगो ।।

छांड़ जग नाते जे प्रेम रस माते संत,
तिनही के संग निस बासर वितोउगो ।
आनद के कंद बृजचंद के पदारविंद,
ह्वै कर अलिंद मकरंद सुख भोऊगो ॥२०॥

इति श्रीराधिकारमन पदार्विंद पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम-आत्मज कवि हरिदेवविरचितायां रसचन्द्रिकायां अस्थाईभाव-वर्नेने नाम एकादश प्रभा ।

अथ शृंगार रस लक्षन—

दोहा—जहाँ दंपति सुख करै, महामोद उर धार ।
सो संजोग सिंगार है, अमित अनंद अगार ॥१॥

कवित्त—राधिकारमन आज माधुरी निकुंजन मैं,
रची विपरीत रति रंग दरकतु है ।
प्यारी झुकझूम मुख चूम लेत प्यारे जू कौ,
प्यारी मुख प्यारौ चूम हिये हरषतु है ॥
कहैं हरिदेव छूटे अधर सुधारस कौं,
टूट टूट मांगपेतैं मोती षरकतु हैं ।
चारु चंद मंडल कौं घेर अंधकार मानो,
बीच बीच तारन की धार वरषतु है ॥२॥

अथ वियोग शृंगार रस लक्षन—

दोहा—पिय प्यारी बिछुरै परै, हियै विरह भर आय ।
सो वियोग श्रंगार कहि, वरनैं कवि समुदाय ॥३॥

वे सुख पुंज भरे जिन कुंज मैं, तेई भई सुख पुंज कौं वासौ ।
सीतल मंद समीरन को थल, जात दहो दिन रात अवासौ ॥
और कछू कहतैं न बनै, गन फूलन को भयौ सूल सवासौ ।
राग भरे हिय मैं मन मोहन, आन कियौ विरहागम वासौ ॥४॥

दोहा—विप्रलंभ शृंगार मैं, दंपति के तन आय ।
दीह दिसा दस होत अब, ते वरनूं कविराय ॥५॥

प्रथम कहूँ अभिलाष, पुनि चिंता सुमरन होय।
ताते वरनों गुन कथन, फिर उदेग कहि सोय ॥६॥
पुनि प्रलाप उन्माद अरु, जड़ता व्याधि बषान ।
मरन कहत दसई दसा, कबि कोविद जिय जान ॥७॥

अथ अभिलाष लच्छन—

दोहा—इच्छा जो पिय मिलन की रहै सदाई चित्त ।
ताहि दसा अभिलाष कहि, वरनत हैं कवि मित्त ॥८॥

होत रहै मन यों हरिदेव जू, जारकै लोक की लाज के फंद कौ ।
कीजै निहारिवौई निस बासर, कोऊ उपाय बनैं छर छंद कौ ॥
मोर पखा मन मोहनी मूरति, सोहत हार हिये अरविंद कौ ।
नैंन बड़े बड़े वे अरविंद से, इंदु सौ आननि वीर गुविंद कौ ॥६॥

वैन वजावत आन कढ्यौ, बहु मैन की सूरत रूप उजारौ ।
गेर गयौ कछू चेटक सौं, छिन हेर इतै मुख फेर निरारौ ॥
लोक की लाज छुटी हरिदेव जू, ह्वै न कछू कुल कानि सन्हारौ ।
मोहनी डार गये री गयौ, मन लै गयौ सामरी सूरत वारौ ॥१०॥

अथ चिंता लक्षन—

दोहा—चिंता जो पिय मिलन की, चित मैं रहै समोय ।
चिंता तासौं कहत हैं, कवि कोविद सब कोय ॥११॥

सीर समीर करैं तन पीर न, वीर अबीर न धीर छुड़ावै ।
षावी मनोजन वान कमैं, कल कंठन कूज हियौ तरसावै ॥
कवि ह्वै है घड़ी धन सौं सजनी, हरिदेव पिया हंस कंठ लगावै ।
फूल की सेजन सूल करैं औ, सुधाकरि सुध सुधा वरसावै ॥१२॥

अथ सुमरन लक्षन—

दोहा—लखी सुनी यह बात कौ, सुमरन जियमें होय ।
सुमरन ताकों कहत हैं, कवि कोविद सब कोय ॥१३॥

कैसै लिखै वतियां पतिया, हरि जात कर्यौ नहिं एकहू अंक है ।
लाजत हीं लखि वेली जवै, अब तेई वढावति हे मग्ण संक है ॥
होत पराभम है जब मोहन, देखत है हमैं रावर अंक है ।

ते अब पाछिल वैर सम्हार कै, जारत कोकिल कंज मयंक है ॥१४॥

अथ गुन कथन लक्षन—

दोहा—प्यारी पिय गुन विरह मैं, लोचन गोचर होय।
गुन बरनन तासौं कहैं, ग्रंथन मैं कबि लोय ॥१५॥

वह फूली रहै अति आनद मैं, नित वास सदा हरि के उरली।
कर कंजन के रस कढ्यौ करै, जहि प्रान पिया अधरान झरली ॥
हरिदेव जू भागन कौ लहनौ, हम कौ तो बियोग विथा सुरली।
धन है वनमाल तुही जग मैं, अरु कै धन एक तुही मुरली ॥१६॥

खंजन दौर दुरै वन मैं मृग, छोरनि के मद मोद निकंद से।
दीन कीये मन मीननि के, छवि छीन अलिंद के वृंद अमंद से ॥
चेटक से है चलाक महा, हरिदेव की सौ जिय आनदकंद से।
आन गढ़े न कढ़े सजनी, फिर नैन बड़े बड़े वे अरबिंद से ॥१७॥

अथ उद्वेग लच्छन—

दोहा—विरह विथा मैं विकल अति, और न कछू सुहाय।
कहैं ताहि उद्वेग हैं, जे प्रवीन कविराय ॥१८॥

फूले पलास हुलास हरै, अलि गुंज करै छतियान दरेरे।
तीर सौ मंद समीर लयौ, अरु काल सी कोयल प्रान छरेरे ॥
फूल त्रिसूलनि के सूल भये, विरहागन जात दुकूल जरेरे।
कंत विना भये अंतक से, ये वसंत के वासर वीर करेरे ॥१९॥

अथ प्रलाप लच्छन—

दोहा—बिरह विथा बाढ़ै अधिक, पियप्यारी तन आन।
बिन समुझैई बक उठै, ताहि प्रलाप बखान ॥२०॥

कवित्त—मार दैरी दादुर ये दूनौ दुख दैन लागे,
चातिक चवाइन की चैचन को जारदै।
जारदै री झिल्ली गन झीगुर झपाक दैना,
जोहि जोहि जुगनू जमातन को वारदै।
वार दैरी वेग दै विलोक वग पांतन कौं,
वांत ऐसी वारद की बूंदन को ढार दै।

ढार दैरी घोर घनघोर न सतावै अरु,
सौर न मचावै इन मोरन को मारदै ॥२१॥

अथ उन्माद लक्षन—

दोहा—उत्कंठा तै मोह मय, वृथा करै कछू काज।
जान दसा उन्माद सो, कहै सबै कविराज ॥२२॥

कवित्त—जा दिन ते परे वाकी दीठि मन मोहन जू,
भई है विकल कहूँ कल न परत है।
घर तैं निकसि कभूं जात वन वीथन मैं,
वन तैं निकस फेर घर कौं फिरत है ॥
ऐसैं ई विहात दिन रैंन हरिदेव की सौं,
धीर न धरात सुधि और की हरत है।
व्याकुल विहाल वाल लालन तिहारे विभ्रम,
तरुन तमालन कौं भेट वो करत है ॥२३॥

दोहा—जहाँ विरह संताप दैं, जड़ ह्वै जाय सरीर।
जड़ता तासौं कहत हैं, जे कविता मैं धीर ॥२४॥

कवित्त—देखि आई लालन हवाल वृज वालन कौं,
दीह दुख जालन कौ होत है न अनुमान।
तन की सम्हार न सम्हार पर भूषन की,
ऐसी वै सम्हार भूली सुध खानपान।
अलिन के हौस औ हवास हू हराने सब,
आहि सुन कहैं अभी जीहे नैंक जी है जान।
अब लौं तिहारी सौं तिहारी प्रान प्यारी जू के,
पिऊ पिऊ बोल बोल राखे है पपीहा प्रान ॥

अथ व्याधि लच्छन—

दोहा—बाढ़े वेदन मदन की, कृसता होय सरीर।
व्याधि दसा ताको कहैं, जे कवि तामैं धीर ॥

कवित्त—नैसक संदेसौ एक लाई मन मोहन जू,
सोहनी सी सूरत के धारवे कौं कल हौ।

आये बद औध तुम आपनी पियारी जू सौं,
तापर विहारी पल चार इक विचल हौ।
वाके नैंन वारजतै वारध अपार बाढ़ै,
पार न लहोंगे फेर जोन अब चल हौ।
बूड़ेगौ देश जामैं नाह न अदेस कछु,
नीकै कै वृजेस आप ठाढे हाथ मल हौ ॥

इति श्रीराधिकारमन पदार्बिंद मकरंद पानानंदित अलिंद श्रीरतीराम आत्मज कवि हरिदेवविरचितायां रसचन्द्रिकायां शृंगाररसवर्ननें नाम द्वादश प्रभा ।

अथ हास्य रस लच्छन—

छप्पय-विकृत वेष जो किये सोई आलिबन जानहु ।
अलवल वचन रसाल सोई उद्दीपन मानहु ॥
वदन नेत्र संकोचनादि अनुभाव विचारौ ।
उतकंठा चपलादि हरष संचारी धारौ ॥
हास्य अस्थाई कहत है श्वेत वर्ण सुखराशि लहि ।
प्रथम देवता तासु कौं हास्य सुरस हरिदेव कहि ॥१॥

अथ करुणा रस लच्छन—

छप्पै--आलिवन है सोच्य तासु गुन है उद्दीपन ।
प्रभु निंदा तन ताप जान अनुभाव महीपन ॥
सात्वक स्थंवादि और मुनि अश्रु विचारी ।
अपस्मार निर्वेद दीनता मोह संचारी ॥
सोक अस्थाई भाव है वरन कबूतर के कहौ ।
जमराज देवता जानि कै करुना रस कवि जन लहौ ॥२॥

अथ सेन्द्र रस लक्षन—

छप्पय-आलंवन है सस्त्र सस्त्र उद्दीपन जानहु ।
आनन नैंन कपोल अरुन अनुभाव वखानहु ॥
सात्वक स्वेद वखान बुहर बरनौ संचारी ।

गर्व उग्रता मति और आवेग विचारी ॥
क्रोध स्थाईभावं अरु रक्त वर्ण जिय जानियौ ।
रुद्र देवता तास कौ ताहि रुद्र रस मानियौ ॥३॥

अथ वीर रस लच्छन—

छप्पय–आलिंवन वर वीर जान उद्दीपन ये सुन ।
रंगभूमि सस्त्र अस्त्र तंवूर तूर धुन ॥
सूरापन रणधीर प्रभा अनुभाव बखानहु ।
सात्विक कहि पुलिकादि हरष संचारी जानहु ॥
पाई है उत्साह जहि सुवरन वरन वखानियै ।
जाकौ देव महेंन्द्र है ताहि वीर रस जानियै ॥४॥

अथ भयानक रस लक्षन—

छप्पय–जो भय कौ अस्थान सोई आलंबन जानहु ।
ताके कर्म कराल सोई उद्दीपन मानहु ॥
चकित नैन अनुभाव वरन सात्वक सुरभंगा ।
अपरमार कंपेस आदि बिभचारी संगा ॥
भय अस्थाइ भाव अरु कज्जल वर्न बखानियै ।
भय रस को कवि कहत है काल देवता जानियै ॥५॥

कबित्त–श्री वृंदाबन परम धाम नारायन,
वैस कुल वंस हंस उज्ज्वल वरन मैं ।
गदी श्रीगौड़ेश्वर संप्रदा अस्थाय तहाँ,
कोटि दया हरी त्रय ताप के हरन मैं ।
श्रीराधारमन देव निज दासता की छाप,
मेर दीनी भाल गुरु आश्रय करन मैं ।
महा दीन हीन गति कीनी है सुनाथ नाथ,
कोटि कोटि दंडवत तिनके चरन मैं, ॥६॥